

आज़ादी का संघर्ष • इवेंट बुक्स

वह रात जब 8 डाउन रुकी

काकोरी, 9 अगस्त 1925: एक रेलगाड़ी, बहुत-से लोग, और वे कहानियाँ जो पूरी तरह एक-दूसरे से नहीं मिलतीं



असली स्रोत। असली तस्वीरें। हर मतभेद दिखाया गया।

माता-पिता और शिक्षकों के लिए एक बात

9 अगस्त 1925 की काकोरी रेल लूट भारत के आज़ादी के संघर्ष की सबसे जानी-मानी घटनाओं में से एक है। यह एक असहज करने वाली घटना भी है: एक यात्री मारा गया, इससे पहले की तीन लूटों में तीन गाँववालों की जान गई, और चार नौजवानों को फाँसी हुई। यह किताब उसे उन लोगों के ज़रिए सुनाती है जो वहाँ थे, और उनके ज़रिए भी जो नहीं थे। और यह आपके लिए तय नहीं करती कि हीरो कौन हैं।

किताब कैसे बनी। हर तथ्य उन स्रोतों से आता है जिन्हें खोलकर पढ़ा गया, हर अध्याय के लिए कम से कम दो। जहाँ स्रोत एक-दूसरे से अलग बात कहते हैं, वहाँ नीला डिब्बा बताता है। जहाँ कोई कहानी परिवार की याद या किंवदंती है, वहाँ पाठ यह भी बताता है। कुछ भी गढ़ा नहीं गया है: न कोई मनगढ़ंत बातचीत, न कोई गढ़ी हुई भावनाएँ। अध्यायों को जोड़ने वाले नए पन्ने सिर्फ़ वही तथ्य इस्तेमाल करते हैं जो अध्यायों में ही हैं।

यह किसके लिए है। यह लगभग दस साल और उससे बड़े पाठकों के लिए सरल शब्दों में लिखी गई है, और उन बड़ों को भी पसंद आएगी जो असली कहानी जानना चाहते हैं। यह लगभग 15,000 शब्दों की है, इसलिए हर रात एक अध्याय पढ़ें।

साझा करने से पहले कृपया पढ़ें। किताब ऐसी लूटों का वर्णन करती है जिनमें लोग मरे और चौथे अंक में चार ऐसे आदमियों के आखिरी दिनों का, जिन्हें फाँसी हुई। इसमें न खून-खराबा दिखाया गया है, न हिंसा का गुणगान, पर कुछ अध्याय (खासकर "दिसंबर के दो हफ़्ते" और "फ़ैज़ाबाद की आखिरी सुबह") फाँसी की सज़ा से जुड़े हैं। अगर आप तैयारी करना चाहते हैं तो उन्हें पहले पढ़ लें।

तस्वीरों के बारे में। जिन तस्वीरों और दस्तावेज़ों के साथ श्रेय-पंक्ति है, वे असली हैं और मुफ़्त लाइसेंस वाले अभिलेखागारों से हैं। हर अध्याय की शुरुआत की रंगीन पेंटिंग और तीन कॉमिक पन्ने एआई से, कोई दृश्य दिखाने के लिए बनाए गए हैं; उन पर लेबल लगा है और वे तस्वीरें नहीं हैं। कोई चेहरा गढ़ा नहीं गया है। कॉमिक पन्नों के सारे शब्द अध्यायों से आते हैं।

किताब कैसे सुनाई गई है

किताब को ऐसी फ़िल्म समझिए जो अलग-अलग लोगों के बीच घूमती है। चारों अंकों में से हर एक उसी घटना को अलग-अलग नज़रों से देखता है। अंकों के बीच एक गहरे रंग का पन्ना बताता है कि हम कहाँ हैं और अगले अध्याय क्यों मायने रखते हैं। तीन कॉमिक पन्ने अहम पलों को दिखाते हैं, जिनके कैप्शन अध्यायों से लिए गए हैं।

नारंगी डिब्बा: एक कठिन शब्द का मतलब।

स्रोत कहाँ अलग हैं

नीला डिब्बा: दो या ज़्यादा स्रोत अलग-अलग तथ्य देते हैं, और हम चुपचाप एक को चुनने के बजाय दोनों दिखाते हैं।

इस पर बात कीजिए

1. हरा डिब्बा: ऐसे सवाल जिनका कोई एक सही जवाब नहीं, हर अध्याय के अंत में।

इस किताब में

पहला अंक: योजना

1. खुद को बिस्मिल लिखने वाला कवि प्रमुख
2. राम और अशफ़ाक़ प्रमुख
3. काकोरी को "ना" कहने वाला आदमी

दूसरा अंक: रात

4. काकोरी की ज़ंजीर
5. गाड़ी से उतरने वाला यात्री
6. काकोरी से बच निकलने वाला
7. मामले में, पर गाड़ी पर नहीं
8. गाड़ी से पहले: तीन लूटें जो ग़लत हो गईं

तीसरा अंक: तलाश

9. उर्दू में लिखी पुलिस रिपोर्ट
10. मथुरा का क्लर्क
11. लखनऊ का लंबा मुक़दमा प्रमुख

चौथा अंक: आख़िरी दिन

12. वायसराय के नाम अठहत्तर नाम प्रमुख
13. दो दिन पहले
14. दिसंबर के दो हफ़्ते प्रमुख
15. फ़ैज़ाबाद की आख़िरी सुबह
16. कागज़ के टुकड़ों पर लिखी कहानी प्रमुख

उपसंहार: उसके बाद

17. क़ब्र, मूर्ति और फ़िल्म प्रमुख

कहानी के बाद: रिकॉर्ड कहाँ अलग हैं • प्रश्नोत्तरी • गतिविधियाँ • उत्तर • शब्दावली • स्रोत • तस्वीरों के श्रेय

वे लोग

छह लोग जिनके साथ आप करीब से चलेंगे। बैज बताता है कि स्रोत उन्हें गाड़ी पर बताते हैं या नहीं।

B



राम प्रसाद बिस्मिल

कवि और नेता

गाड़ी पर थे

जन्म 11 जून 1897, शाहजहाँपुर। कवि, अनुवादक और दल के संगठनकर्ता।

फाँसी 19 दिसंबर 1927, गोरखपुर

A



अशफ़ाक़उल्ला ख़ान

कवि, बिस्मिल के दोस्त

गाड़ी पर थे

जन्म 22 अक्टूबर 1900, शाहजहाँपुर। योजना का विरोध किया, फिर उसमें शामिल हो गए।

फाँसी 19 दिसंबर 1927, फ़ैज़ाबाद

L



राजेंद्र लाहिड़ी

इतिहास के विद्यार्थी

गाड़ी पर थे

बनारस में पले-बढ़े। जज ने उन्हें एक नेता बताया। कहा जाता है कि जंजीर उन्होंने खींची थी।

फाँसी 17 दिसंबर 1927, गोंडा

R



रोशन सिंह

स्कूल-शिक्षक और पहलवान

शायद गाड़ी पर नहीं थे

नवादा गाँव से। दो स्रोत कहते हैं कि वे गाड़ी पर नहीं थे, उन पर मुकदमा बमरौली के लिए चला। स्रोत अलग-अलग बात कहते हैं।

फाँसी 19 दिसंबर 1927, इलाहाबाद

C



चंद्रशेखर आज़ाद

जो बच निकले

गाड़ी पर थे

गाड़ी पर मौजूद लगभग दस लोगों में से एक। कभी गिरफ़्तार नहीं हुए। बाद में एचएसआरए के नेता बने।

पुलिस के हाथ कभी नहीं आए

A



अहमद अली

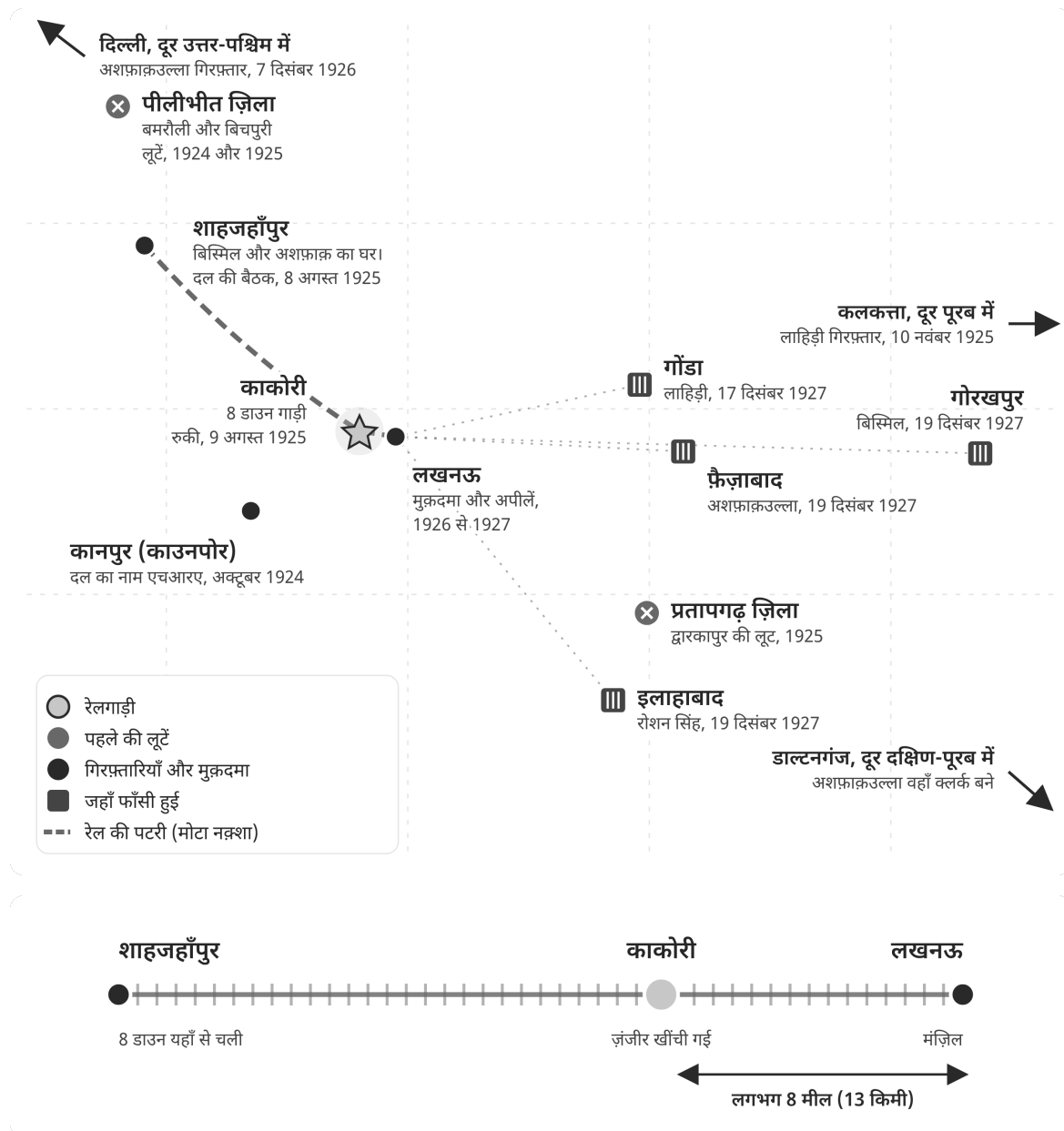
एक यात्री और वकील

एक यात्री

चेतावनी मिलने के बाद अपने डिब्बे से बाहर निकले। गोली लगने से मारे गए। इसके सिवा बहुत कम पता है।

मृत्यु 9 अगस्त 1925

यह कहाँ हुआ



इन नक्शों का हर स्थान इस किताब के किसी अध्याय में आता है। स्थितियाँ लगभग ठीक हैं।

दूसरे लोग जिनसे आप मिलेंगे

मन्मथनाथ गुप्त

गाड़ी पर मौजूद नौजवानों में से एक। अंग्रेज़ी विकिपीडिया कहता है कि जानलेवा गोली उनके पिस्तौल से अनजाने में चली। चौदह साल की सज़ा हुई।

मिस्टर हैमिल्टन

स्पेशल जज जिन्होंने 6 अप्रैल 1927 को फ़ैसला सुनाया।

पंडित जगत नारायण

मशहूर वकील जिन्हें सरकार ने मुक़दमा लड़ने के लिए रखा।

सी. बी. गुप्ता और एच. एन. मिश्र

लखनऊ के दो वकील जो उन अभियुक्तों के लिए खड़े हुए जिनका कोई और नहीं था।

मदन मोहन मालवीय

वायसराय को ज़ापन लिखा, जिस पर केंद्रीय विधायिका के 78 सदस्यों ने दस्तखत किए।

लॉर्ड इरविन

वायसराय जिन्होंने अपील ठुकरा दी।

पूरा मामला एक रेखा में

अक्टूबर 1924		कानपुर की बैठक में दल का नाम हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन रखा गया।
25 दिसंबर 1924		पीलीभीत में बमरौली की लूट; लुटेरों का सामना करने वाला एक पहलवान गोली से मारा गया।
मार्च और मई 1925		दो और घरों की लूट, बिचपुरी और द्वारकापुर; हर जगह एक व्यक्ति की मौत।
8 अगस्त 1925		शाहजहाँपुर में दल रेल की योजना पर फ़ैसला करने के लिए मिलता है।
9 अगस्त 1925		काकोरी के पास 8 डाउन रोकी जाती है। एक यात्री, अहमद अली, मारा जाता है।
11 अगस्त 1925		काकोरी थाने में पुलिस रिपोर्ट (एफ़आईआर) उर्दू में लिखी जाती है।
26 सितंबर 1925		एक ही दिन नौ आदमी गिरफ़्तार, जिनमें रोशन सिंह भी।
26 अक्टूबर 1925		बिस्मिल शाहजहाँपुर में गिरफ़्तार।
10 नवंबर 1925		लाहिड़ी कलकत्ता में दक्षिणेश्वर के एक गुप्त बम कारख़ाने में गिरफ़्तार।
जनवरी या मई 1926		लखनऊ में मुक़दमा शुरू। तारीख़ पर स्रोत एकमत नहीं।
7 दिसंबर 1926		एक साल फ़रार रहने के बाद अशफ़ाक़उल्ला दिल्ली में गिरफ़्तार (एक बयान कहता है जुलाई 1926)।
6 अप्रैल 1927		फ़ैसला: पहले मुक़दमे में तीन को फाँसी; पंद्रह को जेल की सज़ा।
अगस्त 1927		चीफ़ कोर्ट फाँसी की सज़ाएँ बनाए रखती है (11 या 22 अगस्त; स्रोत अलग-अलग कहते हैं)।
16 सितंबर 1927		आखिरी अपील प्रिवी काउंसिल और सम्राट को भेजी गई। ठुकरा दी गई।
17 दिसंबर 1927		राजेंद्र लाहिड़ी को गोंडा जेल में दो दिन पहले फाँसी।
19 दिसंबर 1927		बिस्मिल, रोशन सिंह और अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को गोरखपुर, इलाहाबाद और फ़ैज़ाबाद में फाँसी।

रंग: योजना रात तलाश आखिरी दिन

सात बजे के कुछ बाद

9 अगस्त 1925 की शाम है, सात बजे के कुछ बाद। 8 डाउन शाहजहाँपुर से लखनऊ की ओर चल रही है। यह एक आम रेलगाड़ी है। यात्री डिब्बों में बैठे हैं। गार्ड के डिब्बे में, एक धातु की तिजोरी में, वह पैसा जा रहा है जो ब्रिटिश सरकार का है।

लखनऊ से लगभग आठ मील दूर, काकोरी नाम के एक छोटे स्टेशन के पास, कोई आपातकालीन जंजीर खींच देता है।

गाड़ी धीमी होकर रुक जाती है। एक किताब के बयान में, दो आदमी गार्ड को पकड़ लेते हैं और दूसरे गोलियाँ चलाते हैं। अदालत का इतिहास कहता है कि यात्रियों से अंदर ही रहने को कहा जाता है: उन्हें कोई नुकसान नहीं होगा, क्योंकि वे लोग बस सरकारी पैसा चाहते हैं। उनमें से कुछ आदमी गार्ड के डिब्बे में चढ़कर हथौड़े से एक धातु का संदूक तोड़ देते हैं। कुछ ही मिनटों में नक़दी उनके हाथ में है।

एक यात्री अंदर नहीं रुकता।

दो साल के भीतर यह एक शाम लगभग चालीस गिरफ़्तारियों, लखनऊ के एक मुक़दमे, केंद्रीय विधायिका के अठहत्तर सदस्यों के दस्तख़त वाली एक अपील और चार फाँसियों तक पहुँचाएगी।

पर उस गाड़ी पर मौजूद आदमी वहाँ संयोग से नहीं पहुँचे थे। उस रात को समझने के लिए हमें उनसे एक-एक करके मिलना होगा, और उसे हर सीट से सुनना होगा। बयान हमेशा एक-दूसरे से मेल नहीं खाते। यह भी कहानी का हिस्सा है।

आँकड़ों में वह रात



9 अगस्त 1925

शाम सात बजे के कुछ बाद, लखनऊ से लगभग आठ मील दूर, काकोरी के पास 8 डाउन रोकी गई।



लगभग 10

गाड़ी पर नौजवान। पुलिस की पहली रिपोर्ट में 20 से 25 कहा गया था।



3 रक़मों

4,553-3-6 रुपये, 4,601-15-6 रुपये या लगभग 8,000 रुपये। रिकॉर्ड एकमत नहीं।



1 मौत

अहमद अली, वकील, डिब्बे से उतरने के बाद गोली से मारे गए।



24 पर आरोप

लगभग चालीस लोग गिरफ्तार हुए। चौबीस पर आरोप लगे। फ़ैसला 6 अप्रैल 1927 को।



78 नाम

केंद्रीय विधायिका के वे सदस्य जिन्होंने वायसराय को अपील पर दस्तखत किए। वह ठुकरा दी गई।



4 फाँसियाँ

लाहिड़ी को 17 दिसंबर 1927 को। बिस्मिल, रोशन सिंह और अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को 19 तारीख़ को।



4 जेलें

गोंडा, गोरखपुर, इलाहाबाद, फ़ैज़ाबाद।

ये आँकड़े इस किताब के अध्यायों से आते हैं। जहाँ स्रोत अलग हैं, वहाँ अध्याय दोनों दिखाते हैं।

पहला अंक

योजना

शाहजहाँपुर, 8 अगस्त 1925

8 अगस्त 1925 को शाहजहाँपुर में एक गुप्त दल के सदस्य यह तय करने के लिए मिले कि रेलगाड़ी लूटी जाए या नहीं। दल का नाम हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन था, यानी एचआरए। वह अंग्रेज़ों को ताक़त के बल पर भारत से निकालना चाहता था, और उसके पास लगभग कोई पैसा नहीं था। बंदूकों में पैसा लगता है। पर्चों में पैसा लगता है। एक शहर से दूसरे शहर जाने में भी पैसा लगता है।

उस बैठक को देखने से पहले हमें जानना चाहिए कि कमरे में कौन-कौन था। उनमें से दो आदमी एक ही शहर के कवि थे, एक हिंदू और एक मुसलमान। एक नेता था। दूसरा योजना के खिलाफ़ बोला।



खुद को बिस्मिल लिखने वाला कवि

उन्होंने कविताएँ लिखीं, किताबों के अनुवाद किए और एक गुप्त क्रांतिकारी दल चलाया। फाँसी से पहले के आखिरी दिनों में भी वे लिख रहे थे। यह राम प्रसाद बिस्मिल की ज़िंदगी है।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह जेल से सालों पहले लिखते हुए नौजवान राम प्रसाद को दिखाती है। यह तस्वीर नहीं है।

दिसंबर 1927 की बात है। गोरखपुर जेल में एक क़ैदी जितनी तेज़ी से हो सके लिखता जा रहा था। वह अपनी ही ज़िंदगी की कहानी लिख रहा था। उसे पता था कि उसके पास ज़्यादा समय नहीं है। कुछ ही दिनों में उसे फाँसी दी जाने वाली थी।

उसका नाम राम प्रसाद था। लेकिन अपनी कविताओं पर वह एक और नाम लिखता था: बिस्मिल।

शाहजहाँपुर का एक लड़का

राम प्रसाद का जन्म 11 जून 1897 को शाहजहाँपुर में हुआ। यह शहर आज के उत्तर प्रदेश में है। उनके पिता का नाम मुरलीधर था और माँ का नाम मूलमती।

पिता ने उन्हें घर पर हिंदी सिखाई। उर्दू सीखने के लिए उन्हें एक मौलवी के पास भेजा गया। बाद में वे अंग्रेज़ी स्कूल में भी दाखिल हुए, हालाँकि पिता को यह पसंद नहीं था। इसलिए किशोर होते-होते वे तीन भाषाएँ पढ़ लेते थे।

□ **मौलवी:** मुसलमान विद्वान और शिक्षक। उन दिनों उत्तर भारत के बहुत-से बच्चे उर्दू किसी मौलवी से ही सीखते थे।

वे हमेशा अच्छे विद्यार्थी नहीं थे। एक किताब के मुताबिक वे बुरी संगत में पड़ गए थे और पढ़ाई छोड़कर सस्ते उपन्यास पढ़ते रहते थे।

फिर उनकी मुलाक़ात आर्य समाज से हुई। यह हिंदू धर्म में सुधार लाने वाला आंदोलन था। वे रोज़ शाहजहाँपुर में उसके मंदिर जाने लगे। वहीं उन्हें स्वामी सोमदेव मिले। स्वामीजी ने उन्हें धर्म के बारे में सिखाया, और राजनीति के बारे में भी।

□ **उपनाम:** वह नाम जो लेखक अपने असली नाम की जगह इस्तेमाल करता है। राम प्रसाद ने तीन नाम अपनाए: राम, अज्ञात और बिस्मिल। बिस्मिल का मतलब है "घायल"।

एक प्रतिज्ञा

राम प्रसाद लगभग 18 साल के थे, जब उन्होंने एक ख़बर पढ़ी जिससे उन्हें बहुत गुस्सा आया। स्वामी सोमदेव के दोस्त भाई परमानंद को अंग्रेज़ों ने फाँसी की सज़ा सुना दी थी।

राम प्रसाद ने हिंदी में एक कविता लिखी, "मेरा जन्म"। उसमें उन्होंने अंग्रेज़ी राज से लड़ने का वादा किया। उन्होंने बदला लेने की क़सम भी खाई।

"हैंग्ड फ़ॉर पैट्रियटिज़्म" (Hanged for Patriotism) नाम की किताब के अनुसार स्वामी सोमदेव ने उन्हें चेताया: "क़सम खाना आसान है, पर उसे निभाना मुश्किल।"

किताबें, पर्चे और एक नदी

राम प्रसाद ने अपनी क़सम निभाई। स्वामी सोमदेव की मदद से उन्होंने एक हिंदी किताब छपवाई, जिसमें बताया गया था कि अमेरिका ने ब्रिटेन से आज़ादी कैसे पाई। सरकार ने उस किताब पर रोक लगा दी।

उन्होंने "मातृवेदी" नाम का एक गुप्त दल बनाया। फिर वे गेंदालाल दीक्षित से जा मिले। गेंदालाल दीक्षित एक स्कूल-शिक्षक थे और उनका अपना अलग दल था। दोनों ने मिलकर इटावा, मैनपुरी, आगरा और शाहजहाँपुर जैसे शहरों के नौजवानों को जोड़ा।

28 जनवरी 1918 को राम प्रसाद ने "देशवासियों के नाम संदेश" नाम का एक पर्चा छपवाया। उसमें उनकी कविता "मैनपुरी की प्रतिज्ञा" भी थी। दल के लिए पैसा जुटाने को उन्होंने कुछ डकैतियाँ भी कीं।

पुलिस ने उनका पीछा किया। एक बाद की कहानी के अनुसार, गोलीबारी के बीच राम प्रसाद यमुना नदी में कूद पड़े और पानी के नीचे तैरते हुए निकल गए। पुलिस ने समझा कि वे डूब गए।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

क्या यह सच है? नदी वाली बच निकलने की बात बाद की कहानियों से आई है। पुलिस की किसी रिपोर्ट में इसका ज़िक्र नहीं मिला। इसलिए पक्का नहीं कहा जा सकता कि असल में क्या हुआ था।

यह मामला "मैनपुरी षड्यंत्र केस" के नाम से जाना गया। नवंबर 1919 में एक मजिस्ट्रेट ने राम प्रसाद को फ़रार घोषित कर दिया। यानी ऐसा वांछित आदमी जो मिल नहीं रहा। वे लंबे समय तक छिपे रहे। फ़रवरी 1920 में, जब इस केस के क़ैदी छोड़ दिए गए, तब वे शाहजहाँपुर अपने घर लौट आए।

लेखक और संगठनकर्ता

राम प्रसाद लिखते रहे। उन्होंने कविताएँ लिखीं और बांग्ला और अंग्रेज़ी की किताबों का हिंदी में अनुवाद किया।

वे योजनाएँ भी बनाते रहे। 1923 में इलाहाबाद में उन्होंने सचींद्रनाथ सान्याल और दूसरे साथियों के साथ एक नई गुप्त पार्टी के नियम लिखे। अक्टूबर 1924 में कानपुर की एक बैठक में उस पार्टी का नाम रखा गया: हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, यानी एचआरए। राम प्रसाद को हथियारों की ज़िम्मेदारी दी गई।

शाहजहाँपुर के एक नौजवान कवि, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, उनके पक्के दोस्त बन गए। एक हिंदू था जो आर्य समाज में पूजा करता था, दूसरा मुसलमान। उनकी दोस्ती मौत तक रही।

काकोरी

एचआरए को पैसे की ज़रूरत थी। 9 अगस्त 1925 को लखनऊ से लगभग आठ मील दूर काकोरी के पास राम प्रसाद और उनके साथियों ने जंजीर खींचकर एक रेलगाड़ी रोक ली। उन्होंने गार्ड के डिब्बे में रखी सरकारी तिजोरी तोड़ी और पैसे ले लिए।

फिर कुछ बुरा हो गया। गाड़ी में सफ़र कर रहे एक यात्री, अहमद अली नाम के वकील, डिब्बे से बाहर निकले। उन्हें गोली मार दी गई और वे मारे गए।

☞ स्रोत कहाँ अलग हैं

गोली किसने चलाई?: अदालत का इतिहास बस इतना कहता है कि डिब्बे से उतरने के बाद अहमद अली को गोली लगी। विकिपीडिया के अनुसार गोली अनजाने में मन्मथनाथ गुप्त से चल गई थी।

पुलिस ने करीब चालीस लोगों को गिरफ़्तार किया। मुक़दमा मई 1926 में शुरू हुआ। 6 अप्रैल 1927 को जज ने राम प्रसाद, राजेंद्र लाहिड़ी और रोशन सिंह को फाँसी की सज़ा सुनाई। अशफ़ाक़उल्ला पर अलग मुक़दमा चला, उन्हें भी फाँसी की सज़ा मिली।

अपीलों की गई, लंदन तक। वे सब नाकाम रहीं।

आखिरी पन्ने

गोरखपुर जेल की अपनी कोठरी में राम प्रसाद ने अपनी आत्मकथा लिखी। "हैंड फ़ॉर पैट्रियटिज़्म" किताब के अनुसार उन्होंने आखिरी पन्ने 17 दिसंबर 1927 को लिखे, और वे चोरी-छिपे जेल से बाहर पहुँचा दिए गए।

18 दिसंबर को उनकी माँ उनसे मिलने आई। बाद की एक कहानी के अनुसार माँ ने कहा कि उन्हें बेटे पर गर्व है, और बेटे ने उनसे आशीर्वाद माँगा। उनके सही शब्द उस समय किसी ने लिखे नहीं थे।

☞ स्रोत कहाँ अलग हैं

याद किया गया, दर्ज नहीं हुआ: बिस्मिल और उनकी माँ ने क्या कहा, यह बहुत साल बाद लिखी गई किताबों से आता है।

19 दिसंबर 1927 की सुबह गोरखपुर जेल में राम प्रसाद बिस्मिल को फाँसी दे दी गई। तब वे 30 साल के थे। उसी दिन अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को फ़ैज़ाबाद में फाँसी हुई। रोशन सिंह को इलाहाबाद की नैनी जेल में फाँसी दी गई। राजेंद्र लाहिड़ी को दो दिन पहले गोंडा में फाँसी हो चुकी थी।

एक किताब कहती है कि वे "वंदे मातरम्" और "भारत माता की जय" पुकारते हुए फाँसी के तख़्ते तक गए।

☞ स्रोत कहाँ अलग हैं

आखिरी शब्द: अलग-अलग बयान अलग-अलग आखिरी शब्द बताते हैं। सब बाद में लिखे गए थे। उस सुबह का कोई रिकॉर्ड नहीं मिला है।

उनका अंतिम संस्कार राप्ती नदी के किनारे हुआ।

वे क्या छोड़ गए

उनकी आत्मकथा उनकी मौत के बाद छपी। ब्रिटिश पुलिस ने उसका अपना एक मोटा-मोटा अंग्रेज़ी अनुवाद बनाया, ताकि अफ़सर उसे चुपचाप पढ़ सकें।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

दो बातें: विकिपीडिया के अनुसार संपादक गणेश शंकर विद्यार्थी ने उसे 1928 में छपा। "हैंड फ़ॉर पैट्रियटिज़्म" के अनुसार वह 1929 में निकली और उसी वक़्त प्रतिबंधित कर दी गई।

आज शाहजहाँपुर के पास का एक रेलवे स्टेशन उनके नाम पर है। उनके गृहनगर में एक स्मारक भी है।

यह क्यों मायने रखता है

राम प्रसाद बिस्मिल को क्रांतिकारी के रूप में याद किया जाता है। पर वे पाठक भी थे, अनुवादक भी और कवि भी। वे चाहते थे कि भारत आज़ाद हो, और वे मानते थे कि इसके लिए हथियार उठाकर लड़ना चाहिए।

आज़ादी की लड़ाई में हर किसी को यह रास्ता ठीक नहीं लगा। और अगस्त की उस शाम काकोरी में एक आम यात्री की जान चली गई। दोनों बातें उनकी कहानी का हिस्सा हैं।

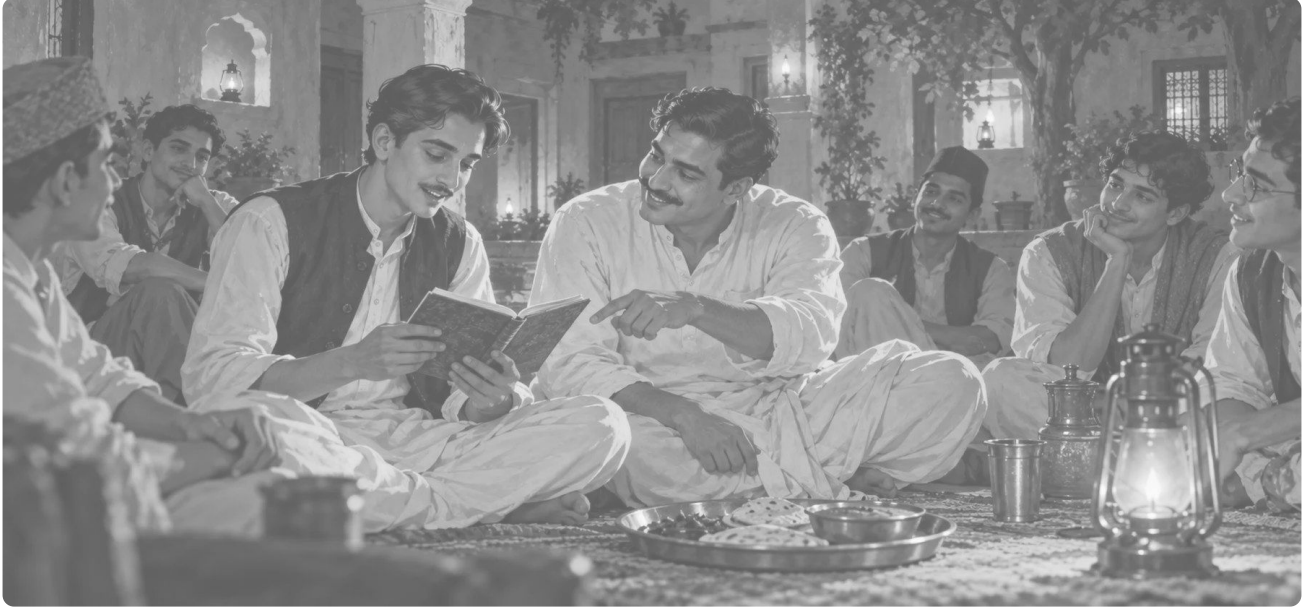
आज बहुत-से लोग मशहूर गीत "सरफ़रोशी की तमन्ना" को "बिस्मिल का गीत" कहते हैं। जैसा कि यहाँ की एक और कहानी बताती है, उसे उसी उपनाम वाले एक दूसरे कवि ने लिखा था। राम प्रसाद बिस्मिल ने अपनी ढेरों कविताएँ खुद लिखीं। उनकी आखिरी रचना उनकी अपनी कहानी थी।

इस पर बात कीजिए

1. बिस्मिल ने कविताएँ लिखीं, किताबों के अनुवाद किए और एक गुप्त दल चलाया। इनमें से कौन-सी बात आपको सबसे ज़्यादा हैरान करती है, और क्यों?
2. कहानी कहती है कि नदी वाली बच निकलने की बात बाद की कहानियों से आई है और उसकी कोई पुलिस रिपोर्ट नहीं है। एक इतिहासकार को ऐसी कहानी के साथ कैसा बर्ताव करना चाहिए?

राम और अशफ़ाक़

एक हिंदू था जो आर्य समाज के मंदिर में पूजा करता था। दूसरा एक पठान परिवार का मुसलमान। उन्होंने साथ कविताएँ लिखीं, एक ही थाली में खाया, और एक ही दिन अपनी जान दी।



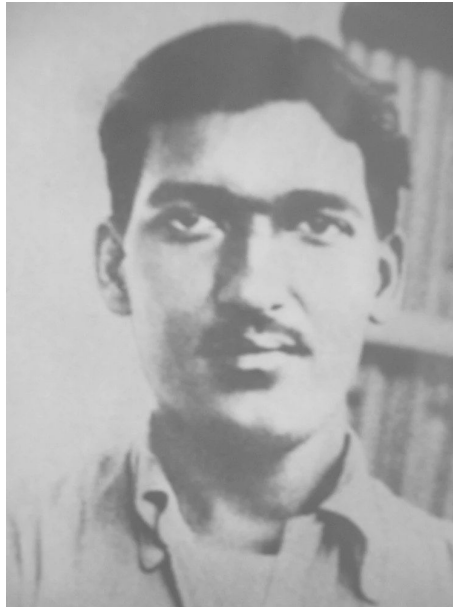
इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

शाहजहाँपुर उत्तर प्रदेश का एक पुराना शहर है। सौ साल पहले वहाँ दो नौजवान रहते थे, जो आगे चलकर भारत के इतिहास की सबसे मशहूर दोस्तियों में से एक बने।

एक थे राम प्रसाद। वे "बिस्मिल" नाम से कविताएँ लिखते थे। वे हिंदू थे और आर्य समाज के सदस्य थे।

दूसरे थे अशफ़ाक़उल्ला ख़ान। वे मुसलमान थे और एक पठान परिवार से थे। वे भी कविताएँ लिखते थे, उर्दू में।

लोग अक्सर कहते हैं कि भारत की आज़ादी हिंदुओं और मुसलमानों ने मिलकर जीती। इन दोनों दोस्तों की कहानी दिखाती है कि वह मिलकर लड़ना कैसा दिखता था।



अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, 1920 के दशक की एक बिना तारीख़ वाली तस्वीर में।
अज्ञात फ़ोटोग्राफ़र, सार्वजनिक संपत्ति (public domain)। यह तस्वीर कहाँ से आई

सबसे छोटा बेटा

अशफ़ाक़उल्ला ख़ान का जन्म 22 अक्टूबर 1900 को शाहजहाँपुर में हुआ। वे अपने घर में सबसे छोटे थे। उनके पिता शफ़ीक़ उल्लाह ज़मींदार थे। उनके परिवार में फ़ौज में सेवा करने की पुरानी परंपरा थी।

बचपन में अशफ़ाक़ शहर के एक स्कूल में पढ़ने जाते थे, एबी रिच मिशन हाई स्कूल।

बड़े भाई की कहानियाँ

अशफ़ाक़ के एक बड़े भाई थे, रियासत। रियासत राम प्रसाद बिस्मिल के साथ एक ही कक्षा में पढ़े थे।

तब तक बिस्मिल शाहजहाँपुर में मशहूर हो चुके थे। वे अंग्रेज़ों के खिलाफ़ एक गुप्त साज़िश में शामिल रहे थे और फ़रार भी रह चुके थे। रियासत अपने छोटे भाई को बिस्मिल की हिम्मत के क्रिस्से अक्सर सुनाते थे। वे बिस्मिल की उर्दू कविताओं के बारे में भी बताते थे।

अशफ़ाक़ मोहित हो गए। वे इस आदमी से मिलना चाहते थे।

वे कैसे मिले

शुरू में बिस्मिल को उस लड़के में कोई दिलचस्पी नहीं थी, जो बार-बार मिलने की कोशिश करता रहता था। उन्होंने बस उसे अनदेखा कर दिया।

फिर असहयोग आंदोलन के दिनों में बिस्मिल शाहजहाँपुर की जनसभाओं में भाषण देने लगे। एक सभा में अशफ़ाक़ ख़ुद उनके पास गए और अपना परिचय दिया। उन्होंने कहा कि वे बिस्मिल के पुराने सहपाठी के छोटे भाई हैं। उन्होंने कहा कि वे भी कविताएँ लिखते हैं।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

दो बातें: एक किताब के अनुसार वे पहली बार स्कूल में मिले थे, जब अशफ़ाक़ आठवीं में थे और बिस्मिल नौवीं में। फ़ैज़ाबाद के एक स्मारक ट्रस्ट के अनुसार वे 1922 में एक जनसभा में मिले। दोनों बातें बाद की हैं, इसलिए पक्का नहीं कहा जा सकता कि कौन-सी सही है।



राम प्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक़ के सबसे करीबी दोस्त।

अज्ञात फ़ोटोग्राफ़र, सार्वजनिक संपत्ति (public domain)। यह तस्वीर कहाँ से आई

साथ-साथ कवि

अशफ़ाक़ अपनी कविताएँ उपनामों से लिखते थे। एक बयान के अनुसार उनके उपनाम वारसी और हसरत थे। दूसरा बयान उन्हें वर्सी और हज़रत लिखता है।

जब बिस्मिल ने अशफ़ाक़ के शेर सुने तो वे प्रभावित हुए। दोनों गहरे दोस्त बन गए। बिस्मिल अक्सर अशफ़ाक़ की कविताएँ सँवारने में मदद करते थे। मुशायरों में लोग इन दोनों को सुनना बहुत पसंद करते थे।

☐ **मुशायरा:** वह महफ़िल जिसमें कवि अपनी कविताएँ ज़्यादातर उर्दू में, सामने बैठे श्रोताओं को सुनाते हैं।

एक थाली, एक नाम

उनकी जीवनी लिखने वालों में से एक ने उनके बारे में एक प्यारा किस्सा सुनाया है।

उन दिनों बहुत-से हिंदू और मुसलमान एक थाली में खाना नहीं खाते थे। ये दोनों खाते थे। वे एक ही बर्तन से खाना खाते थे। और अशफ़ाक़ ने अपने दोस्त को एक खास नाम दिया था। वे उन्हें बस "राम" कहकर बुलाते थे।

🕒 **स्रोत कहाँ अलग हैं**

बाद में सुनाई गई कहानी: यह बात बहुत साल बाद लिखी गई एक जीवनी से आती है। उस समय की कोई चिट्ठी या डायरी इसे साबित नहीं करती। पर इससे पता चलता है कि लोग उनकी दोस्ती को कैसे याद करते हैं।

एक स्कूल और एक फ़ैसला

1920 और 1921 में गांधीजी का असहयोग आंदोलन पूरे भारत में फैल गया। अशफ़ाक़ भी उसमें शामिल हो गए। एक बयान के अनुसार इसी वजह से उनके हेडमास्टर ने उन्हें स्कूल से निकाल दिया।

1921 में दोनों दोस्त अहमदाबाद में कांग्रेस की बैठक में गए।

लेकिन फ़रवरी 1922 में गांधीजी ने आंदोलन वापस ले लिया। बहुत-से नौजवानों को निराशा हुई। बिस्मिल और अशफ़ाक़ ने तय किया कि वे एक अलग, ज़्यादा ख़तरनाक रास्ता चुनेंगे।

गुप्त दल

1924 में एक गुप्त दल बना, हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, यानी एचआरए। बिस्मिल उसके नेताओं में से एक बने। अशफ़ाक़ भी जुड़ गए। यह दल अंग्रेज़ों को ताक़त के बल पर भारत से निकालना चाहता था।

हथियार ख़रीदने के लिए पैसा चाहिए था। इसलिए उन्होंने सरकारी पैसे ले जा रही एक रेलगाड़ी को लूटने की योजना बनाई।

शुरू में अशफ़ाक़ ने इस योजना का विरोध किया। उन्हें लगा कि यह बहुत ख़तरनाक है। पर जब दल ने फ़ैसला कर लिया, तो वे अपने दोस्तों के साथ खड़े रहे।

काकोरी

9 अगस्त 1925 की शाम, लखनऊ के पास काकोरी नाम के गाँव के नज़दीक, दल ने एक रेलगाड़ी रोक ली। उन्होंने गार्ड के डिब्बे की तिजोरी तोड़ी और पैसे ले लिए।

लूट के दौरान अहमद अली नाम के एक यात्री को ग़लती से गोली लग गई और वे मारे गए। इन नौजवानों का इरादा किसी की जान लेने का नहीं था। पर अब अंग्रेज़ उन्हें बिना रहम के ढूँढ़ने वाले थे।

अशफ़ाक़ उस रात वहाँ थे। उन्होंने अपना पिस्तौल, एक माउज़र, दल के एक और सदस्य मन्मथनाथ गुप्त को दे दिया था।

तीन महीने के भीतर बिस्मिल गिरफ़्तार हो गए। अशफ़ाक़ बच निकले। वे एक साल से ज़्यादा समय तक फ़रार रहे।

जुदाई

एक साल से ज़्यादा समय तक दोनों दोस्त एक-दूसरे से दूर रहे। बिस्मिल लखनऊ की जेल में थे और बाक़ी दल के साथ उन पर मुक़दमा चल रहा था। अशफ़ाक़ छिपे हुए थे। कुछ समय तक उन्होंने एक दूर के शहर में झूठे नाम से क्लर्क की नौकरी भी की।

फिर दिल्ली में एक भरोसेमंद आदमी ने उन्हें पुलिस के हाथों पकड़वा दिया। अशफ़ाक़ गिरफ़्तार हो गए।

पुलिस चाहती थी कि वे बिस्मिल और दूसरों के खिलाफ़ गवाही दें। ऐसा करते तो शायद उनकी जान बच जाती। अशफ़ाक़ ने इनकार कर दिया।

मुख्य मुक़दमा एक साल से ज़्यादा चला। अप्रैल 1927 में जज ने बिस्मिल और दो और लोगों को फाँसी की सज़ा सुनाई। तब तक मुख्य मुक़दमा ख़त्म हो चुका था। इसलिए अशफ़ाक़ पर दल के एक और सदस्य, सर्चीट्रनाथ बख़्शी, के साथ अलग से मुक़दमा चला। बख़्शी को उम्रक़ैद की सज़ा हुई। अशफ़ाक़ को वही सज़ा मिली जो उनके दोस्त बिस्मिल को मिली थी। मौत।

दो जेलें, एक दिन

दोस्तों ने अपील की। अगस्त 1927 में लखनऊ के जजों ने अपीलें सुनीं। उन्होंने सज़ाएँ नहीं बदलीं।

19 दिसंबर 1927 को राम प्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर जेल में फाँसी दी गई।

उसी दिन, एक दूसरे शहर में, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को फ़ैज़ाबाद जेल में फाँसी दी गई।

बिस्मिल 30 साल के थे। अशफ़ाक़ 27 के।

उन्हें साथ-साथ क्यों याद किया जाता है

आज स्कूल, सड़कें और पार्क इन दोनों के नाम पर हैं। फ़िल्मों और टीवी धारावाहिकों में भी उनकी कहानी दिखाई गई है। 2006 की फ़िल्म "रंग दे बसंती" में अभिनेता कुणाल कपूर ने अशफ़ाक़उल्ला ख़ान का किरदार निभाया। और बहुत बार उनके नाम साथ-साथ लिए जाते हैं: बिस्मिल और अशफ़ाक़।

वे अलग-अलग धर्मों के थे। वे अलग-अलग तरीकों से इबादत करते थे। पर उन्होंने अपनी कविताएँ बाँटीं, अपनी थालियाँ बाँटीं, अपने सपने बाँटे, और आखिर में अपनी किस्मत भी।

जब लोग दिखाना चाहते हैं कि अलग-अलग धर्मों के बीच दोस्ती का मतलब क्या हो सकता है, तो वे आज भी राम और अशफ़ाक़ की कहानी सुनाते हैं।

इस पर बात कीजिए

1. थाली बाँटने की कहानी बहुत बाद में लिखी गई एक जीवनी से आती है। किताब फिर भी उसे क्यों सुनाती है, और यह किस तरह सुनाई गई है इससे क्या पता चलता है?
2. अशफ़ाक़ ने अपने दोस्तों के खिलाफ़ गवाही देने से इनकार कर दिया। वे क्या सोच रहे होंगे?

काकोरी को "ना" कहने वाला आदमी

जब उनके दोस्तों ने सरकारी रेलगाड़ी लूटने की योजना बनाई, तो अशफ़ाक़उल्ला ख़ान ने उसका विरोध किया। फिर दल ने फ़ैसला किया, और वे फिर भी उनके साथ चले गए।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

1925 की गर्मियों में नौजवान क्रांतिकारियों के एक गुप्त दल के सामने एक समस्या थी। वे अंग्रेज़ों से लड़ना चाहते थे। पर उनके पास लगभग कोई पैसा नहीं था।

बंदूकों में पैसा लगता है। पर्चे छापने में पैसा लगता है। एक शहर से दूसरे शहर जाने में भी पैसा लगता है।

इस दल का नाम हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन था, यानी एचआरए। उसके नेता राम प्रसाद बिस्मिल थे।

एक साहसी विचार

बिस्मिल ने एक बात देखी थी। रेलगाड़ियाँ अंग्रेज़ सरकार का जमा किया हुआ पैसा एक शहर से दूसरे शहर ले जाती थीं। वह पैसा गार्ड के डिब्बे की एक तिजोरी में रखा जाता था।

अगर वे ऐसी ही किसी गाड़ी को रोककर वह पैसा ले लें तो? वे कहते थे कि वह तो भारत का ही पैसा है, जो अंग्रेज़ों ने भारत के लोगों से वसूला है।

8 अगस्त 1925 को दल के लोग फ़ैसला करने के लिए शाहजहाँपुर में मिले।

विरोध की आवाज़

एक सदस्य खुश नहीं था। वे थे अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, बिस्मिल के सबसे करीबी दोस्त।

अशफ़ाक़ ने इस योजना का विरोध किया। उनकी सारी वजहें हमें नहीं पता। पर ख़तरा समझना मुश्किल नहीं है। रेल लूटने का मतलब था कि अंग्रेज़ पुलिस की पूरी ताक़त उनके छोटे-से दल पर टूट पड़ेगी।

दोस्तों के साथ खड़े रहना

दल ने अपना मन नहीं बदला। योजना पर अमल होना तय था।

अब अशफ़ाक़ को फ़ैसला करना था। वे चाहें तो अलग हो सकते थे। या फिर अपने दोस्तों के साथ रह सकते थे, भले ही उन्होंने योजना का विरोध किया था।

उन्होंने साथ रहना चुना।

❏ **वफ़ादारी:** अपने दोस्तों के प्रति सच्चे रहना, मुश्किल वक़्त में भी। इसका मतलब हमेशा उनसे सहमत होना नहीं होता।

9 अगस्त की रात

अगली ही शाम, 9 अगस्त 1925 को, योजना पर अमल हुआ। लखनऊ से ज़्यादा दूर नहीं, काकोरी नाम के स्टेशन के पास गाड़ी रोक दी गई। दल ने गार्ड के डिब्बे की तिजोरी तोड़ी और पैसों के थैले ले लिए।

अशफ़ाक़ ने अपना पिस्तौल, एक माउज़र, दल के एक और सदस्य मन्मथनाथ गुप्त को दे दिया।

फिर कुछ बहुत बुरा हो गया। अहमद अली नाम के एक यात्री, जो वकील थे, गाड़ी से नीचे उतर आए थे। एक गोली चली और वे मारे गए। ज़्यादातर बयान कहते हैं कि गोली मन्मथनाथ गुप्त से चली थी।

किसी की मौत की योजना किसी ने नहीं बनाई थी। पर ऐसा हो गया।

🔍 **स्रोत कहाँ अलग हैं**

कितना पैसा?: पुराने रिकॉर्ड एक-दूसरे से मेल नहीं खाते। अदालत का इतिहास 4,553 रुपये से कुछ ऊपर बताता है। दूसरे बयान लगभग 4,600, या 8,000 तक भी बताते हैं।

वे सही थे

अशफ़ाक़ का डर सच निकला। अंग्रेज़ पुलिस ने दल को ढूँढ़ निकाला। दो साल के भीतर अशफ़ाक़, बिस्मिल और दो और साथियों को फाँसी हो चुकी थी। बहुत-से और लोग सालों के लिए जेल गए।

अशफ़ाक़ ने "नहीं" कहा था। फिर भी वे साथ चले गए, क्योंकि उनके दोस्त जा रहे थे।

क्या यह सही था? लोग आज भी इस पर बहस करते हैं। पर उनकी हिम्मत और उनकी वफ़ादारी पर किसी ने कभी शक नहीं किया।

इस पर बात कीजिए

1. अशफ़ाक़ ने योजना का विरोध किया और फिर भी साथ चले गए। क्या यह वफ़ादारी है या कुछ और? अपनी राय समझाइए।
2. रेलगाड़ी लूटकर दल क्या पाना चाहता था?

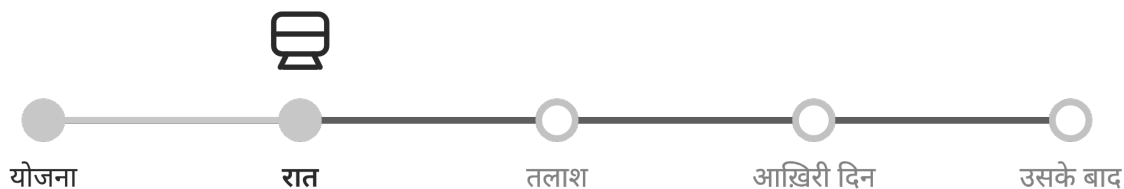
दूसरा अंक

रात

काकोरी के पास, 9 अगस्त 1925

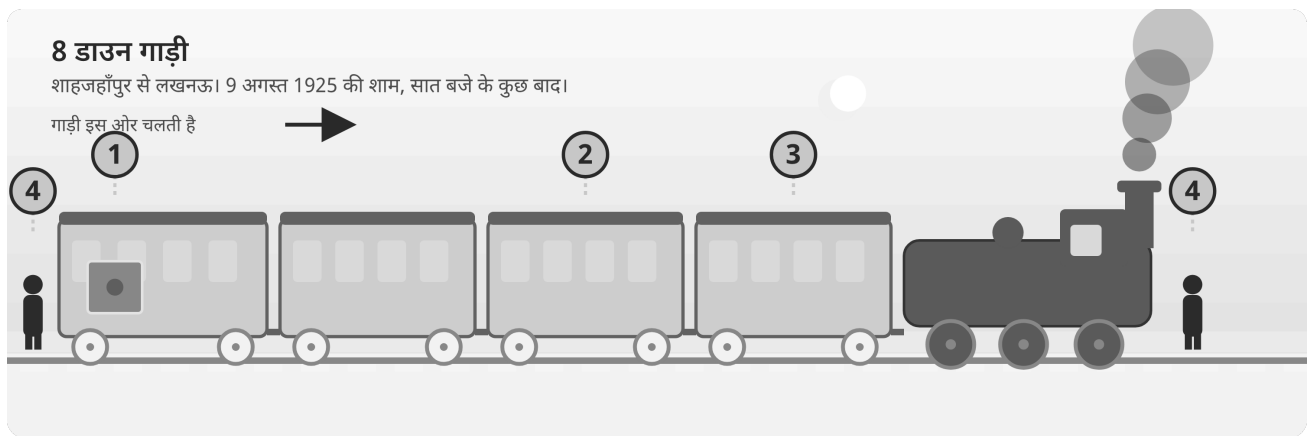
अब वही कुछ मिनट, अलग-अलग सीटों से देखे हुए। दूसरे दर्जे के डिब्बे में बैठा एक विद्यार्थी। अपने डिब्बे से नीचे उतरा एक यात्री। उन्नीस साल का एक नौजवान जो कभी पकड़ा नहीं जाएगा। और एक स्कूल-शिक्षक जो, हमारे दो स्रोतों के अनुसार, गाड़ी पर था ही नहीं।

आप वही रात एक से ज़्यादा बार मिलेंगे। एक बयान से दूसरे बयान तक ब्योरे हमेशा एक जैसे नहीं होते। जहाँ वे अलग हैं, वहाँ अध्याय "स्रोत कहाँ अलग हैं" लिखे नीले डिब्बे में यह बताते हैं।



8 डाउन के अंदर

एक रेखाचित्र, तस्वीर नहीं। वह सिर्फ वही दिखाता है जो अध्याय कहते हैं।



- 1 गार्ड का डिब्बा**
सरकारी पैसा गार्ड के डिब्बे में एक धातु की तिजोरी में जाता है। आदमी उसे हथौड़े से तोड़ते हैं।
- 2 दूसरे दर्जे का डिब्बा**
नेशनल बुक ट्रस्ट की एक किताब कहती है कि लाहिड़ी, अशाफ़ाक़उल्ला और बख़्शी दूसरे दर्जे के डिब्बे से उतरे।
- 3 यात्री**
उन्हें अंदर रहने को कहा जाता है और बताया जाता है कि कोई नुक़सान नहीं होगा। वकील अहमद अली बाहर निकलते हैं और मारे जाते हैं।
- 4 गाड़ी के दोनों सिरे**
एक किताब के बयान में दो आदमी दोनों सिरे पर खड़े होकर गोलियाँ चलाते हैं।

पढ़ते समय इस चित्र को एक मार्गदर्शक की तरह इस्तेमाल कीजिए। जब अध्याय इस बात पर अलग हों कि कौन कहाँ था, तब चित्र कोई पक्ष नहीं चुनता। यह गार्ड का डिब्बा, दूसरे दर्जे का एक डिब्बा, यात्री और गाड़ी के दोनों सिरे दिखाता है, और इससे ज़्यादा कुछ नहीं।

स्रोत कहाँ अलग हैं

चित्र क्या नहीं दिखा सकता: कितने डिब्बे थे, हर आदमी किस डिब्बे में था, और दोनों सिरे पर कौन खड़ा था। हमारे खोले किसी स्रोत में यह नहीं है, इसलिए चित्र अंदाज़ा नहीं लगाता।

अंदर ही रहिए

9 अगस्त 1925। 8 डाउन शाहजहाँपुर से लखनऊ की ओर चल रही है।



काकोरी के पास, लखनऊ से लगभग आठ मील दूर, कोई आपातकालीन जंजीर खींच देता है।

गाड़ी रुक जाती है। एक किताब के बयान में दो आदमी उसके दोनों सिरों पर खड़े होकर गोलियाँ चलाते हैं।



"यात्रियो! डरो मत।"

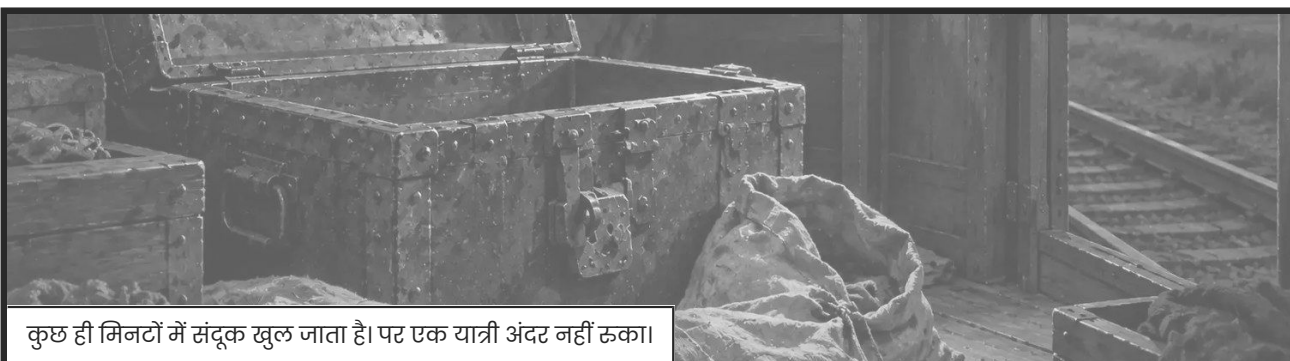
शब्द वैसे जैसे एक किताब देती है



दोनों किताबें चेतावनी को अलग-अलग शब्दों में बताती हैं। दोनों कहती हैं कि यात्रियों को अंदर रहने को कहा गया था।



उनमें से कुछ आदमी गार्ड के डिब्बे में चढ़कर हथौड़े से धातु का एक संदूक तोड़ देते हैं।



कुछ ही मिनटों में संदूक खुल जाता है। पर एक यात्री अंदर नहीं रुका।

दृश्य दिखाने के लिए एआई से बनाई गई तस्वीरें। ये फ़ोटो नहीं हैं। कैप्शन और शब्द अध्याय "काकोरी की जंजीर" से आते हैं। कोई चेहरा गढ़ा नहीं गया है।

काकोरी की जंजीर

9 अगस्त 1925 को इतिहास का एक विद्यार्थी दूसरे दर्जे के डिब्बे में बैठा था। काकोरी में किसी ने जंजीर खींच दी।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

जब कोई रेलगाड़ी की आपातकालीन जंजीर खींचता है तो क्या होता है?

गाड़ी धीमी होती है और रुक जाती है। यात्री सोचते हैं कि क्यों रुकी। 9 अगस्त 1925 की शाम काकोरी के छोटे-से स्टेशन के पास यह रुकना पहले से तय था।

गाड़ी "एट डाउन" थी, यानी 8 डाउन, जो शाहजहाँपुर से लखनऊ जा रही थी। शाम के सात बज चुके थे। जगह लखनऊ से लगभग आठ मील दूर थी।

डिब्बे में बैठा आदमी

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी एक विद्यार्थी थे। द वायर के अनुसार वे बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में इतिहास में एम.ए. कर रहे थे। वे एक बांग्ला साहित्य समिति के मानद सचिव भी थे और बांग्ला पत्रिकाओं में लिखते थे।

वे हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, यानी एचआरए के सदस्य थे। यह गुप्त दल अंग्रेज़ी राज को खत्म करना चाहता था। उसे पैसे की ज़रूरत थी।

योजना थी गाड़ी से सरकारी नक़दी लेने की। किताब के अनुसार जब गाड़ी रुकी तो लाहिड़ी, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान और सर्चींद्रनाथ बख़्शी दूसरे दर्जे के डिब्बे से उतरे। द वायर कहता है कि माना जाता है कि जंजीर लाहिड़ी ने खींची थी।

🔍 स्रोत कहाँ अलग हैं

दो बातें: द वायर और विकिपीडिया कहते हैं कि लाहिड़ी का जन्म 1901 में हुआ। नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब में 1892 लिखा है। द वायर यह भी कहता है कि काकोरी 1927 में हुआ, पर उसकी अपनी तारीखें दिखाती हैं कि 1925 ही सही है। जन्म का कोई रिकॉर्ड हमने नहीं देखा।

किताब के अनुसार क्या हुआ

गार्ड यह देखने के लिए नीचे उतरा था कि जंजीर किसने खींची। किताब के अनुसार दो आदमियों ने उसे पकड़कर पेट के बल लिटा दिया। दो और ने ड्राइवर को इंजन से नीचे धकेल दिया।

दो और आदमी गाड़ी के दोनों सिरों पर खड़े होकर गोलियाँ चलाने लगे। किताब कहती है कि उन्होंने यात्रियों से चिल्लाकर कहा: "यात्रियो! डरो मत।"

हाई कोर्ट का इतिहास कहता है कि उन्होंने यात्रियों को अंदर ही रहने को कहा। उसमें यह भी लिखा है कि उनके सामान को हाथ नहीं लगाया जाएगा, क्योंकि वे सिर्फ सरकारी पैसा चाहते थे।

फिर उनमें से कुछ गार्ड के डिब्बे में चढ़ गए। उन्होंने हथौड़े से एक मज़बूत धातु का संदूक तोड़ा। कुछ ही मिनटों में नक़दी उनके हाथ में थी।

डिब्बे से निकलने वाला यात्री

एक यात्री अंदर नहीं रुका। उसका नाम अहमद अली था और वह वकील था।

हाई कोर्ट का इतिहास कहता है कि चेतावनी दिए जाने के बाद भी वह अपने डिब्बे से बाहर निकल आया। उसे गोली लगी और वह मर गया।

उन लोगों ने यात्रियों से कहा था कि वे सुरक्षित रहेंगे। पर उस रात एक आदमी मारा गया।

मुक़दमा

पुलिस ने देश भर में बहुत-से लोगों को गिरफ़्तार किया। सुनवाई जनवरी 1926 में लखनऊ की एक इमारत, रिंग थिएटर, में शुरू हुई।

जज मिस्टर हैमिल्टन थे, जो स्पेशल जज थे। उन्होंने 6 अप्रैल 1927 को अपना फ़ैसला सुनाया।

हैमिल्टन ने लाहिड़ी को "इस साज़िश के नेताओं में से एक" कहा। उन्होंने कहा कि नेता होने के नाते लाहिड़ी अहमद अली की मौत के लिए भी ज़िम्मेदार हैं। लाहिड़ी को फाँसी की सज़ा सुनाई गई।

□ **साज़िश:** कुछ लोगों का मिलकर बनाया गया गुप्त मंसूबा, जिसमें वे क़ानून के खिलाफ़ कुछ करना चाहते हों।

हमने असली फ़ैसला नहीं पढ़ा है। हम वही शब्द इस्तेमाल कर रहे हैं जो किताब में छपे हैं।

यह क्यों मायने रखता है

भारत में कुछ लोग एचआरए के रास्ते से सहमत नहीं थे। गांधीजी चाहते थे कि आज़ादी बिना हिंसा के जीती जाए।

काकोरी की जंजीर की कहानी हिम्मत और जोखिम की कहानी है। यह उस वकील की भी कहानी है जो उस गाड़ी में सफ़र कर रहा था। दोनों हिस्से इस कहानी में शामिल हैं।

इस पर बात कीजिए

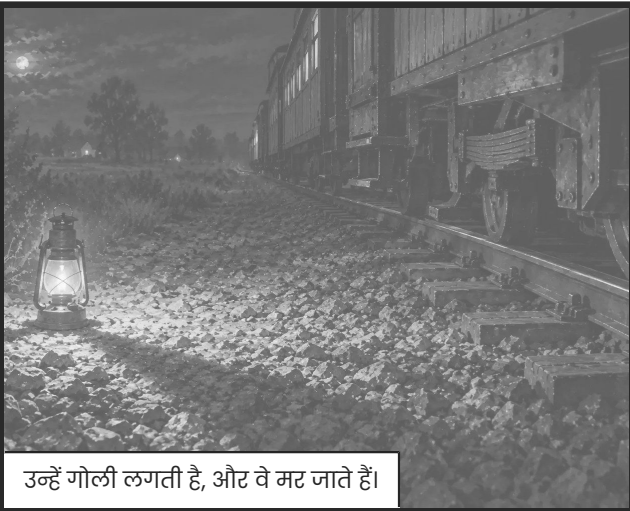
1. यात्रियों को अंदर रहने को कहा गया और भरोसा दिलाया गया कि वे सुरक्षित हैं। आपको क्या लगता है, दल यह क्यों कहना चाहता था?
2. कहानी कहती है कि किताब लाहिड़ी को एक नेता बताती है। जज की यह राय उनके साथ होने वाली बात को कैसे बदल देती है?

यात्री

यात्रियों में अहमद अली नाम के एक वकील हैं। गाड़ी पर मौजूद आदमियों ने सबसे अंदर रहने को कहा है।



चेतावनी मिलने के बावजूद वे अपने डिब्बे से बाहर निकलते हैं।



उन्हें गोली लगती है, और वे मर जाते हैं।

स्रोत कहाँ अलग हैं

गोली किसने चलाई?

अदालत का इतिहास यह नहीं बताता कि गोली किसकी थी।

अंग्रेज़ी विकिपीडिया कहता है कि वह मन्मथनाथ गुप्त की थी, अनजाने में।

एक अखबार की रिपोर्ट इसे अनजाने में चली गोली कहती है।



उन आदमियों ने वादा किया था कि किसी यात्री को नुकसान नहीं होगा। पर उस रात एक आदमी मारा गया। दोनों बातें कहानी का हिस्सा हैं।

दृश्य दिखाने के लिए एआई से बनाई गई तस्वीरें। ये फ़ोटो नहीं हैं। कैप्शन और शब्द अध्याय "गाड़ी से उतरने वाला यात्री" से आते हैं। कोई चेहरा गढ़ा नहीं गया है।

गाड़ी से उतरने वाला यात्री

काकोरी में उन आदमियों ने कहा था कि वे किसी यात्री को नुकसान नहीं पहुँचाएँगे। पर एक यात्री, अहमद अली नाम के वकील, को गोली मार दी गई। उस रात के बारे में स्रोत क्या कहते हैं, और अदालत ने उसे कैसे देखा, यहाँ पढ़िए।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

काकोरी की कहानियों में अक्सर कहा जाता है कि लूटने वालों का इरादा किसी यात्री को नुकसान पहुँचाने का नहीं था। उनकी योजना यही थी। पर असल में ऐसा नहीं हुआ।

9 अगस्त 1925 की शाम 8 डाउन गाड़ी काकोरी के पास रुकी। एक यात्री नीचे उतरा। वह वकील था। उसका नाम अहमद अली था। उसे गोली मार दी गई और वह मारा गया।

चेतावनी

अदालत के इतिहास के अनुसार गाड़ी पर मौजूद लोगों ने यात्रियों से अंदर ही रहने को कहा। उन्होंने कहा कि किसी को कोई नुकसान नहीं होगा, क्योंकि वे बस "सरकारी संपत्ति" के पीछे हैं।

एक किताब के शब्दों में उन्होंने चिल्लाकर कहा: "यात्रियो! डरो मत। हम क्रांतिकारी हैं और आज़ादी के लिए लड़ रहे हैं। आपकी जान, पैसा और इज़्जत सुरक्षित है। पर ध्यान रखिए कि गाड़ी से बाहर झाँकिए मत।"

यह चेतावनी योजना का हिस्सा थी। दल सरकार का पैसा लूटना चाहता था और आम लोगों को छोड़ देना चाहता था।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

दो बातें: दोनों किताबें चेतावनी को अलग-अलग शब्दों में बताती हैं। हमें सही शब्द नहीं पता। दोनों यह कहती हैं कि यात्रियों को गाड़ी के अंदर रहने को कहा गया था।

क्या हुआ

चेतावनी मिलने के बावजूद अहमद अली अपने डिब्बे से बाहर निकले। फिर उन्हें गोली लगी, अदालत का इतिहास यही कहता है।

अंग्रेज़ी विकिपीडिया के अनुसार गोली उन नौजवानों में से एक, मन्मथनाथ गुप्त, के पिस्तौल से चली। हिंदी का बयान इसे और विस्तार से बताता है। किसी ने गुप्त को एक माउज़र पिस्तौल थमा दी थी, ताकि उसका साथी दोनों हाथों से हथौड़े से तिजोरी तोड़ सके। गुप्त से जोश और जल्दबाज़ी में एक गोली चल गई, और वह अहमद अली को लगी। वे वहीं मर गए।

यानी गोली किसी यात्री के लिए नहीं थी। अदालत का इतिहास यह नहीं बताता कि गोली किसकी थी। वह बस इतना कहता है कि उन्हें गोली मारी गई।

क़ानून का जवाब

अहमद अली की मौत से मामला बदल गया। लूट अब एक ऐसा मामला बन गई जिसमें हत्या भी शामिल थी।

जज ने कहा कि राजेंद्र लाहिड़ी इस साज़िश के दो मुख्य नेताओं में से एक थे, इसलिए वे भी "अहमद अली की मौत के ज़िम्मेदार" थे। नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब ये शब्द छापती है। लाहिड़ी को फाँसी की सज़ा मिली।

अंग्रेज़ी विकिपीडिया कहता है कि मन्मथनाथ गुप्त, जिसने गोली चलाई थी, को चौदह साल की जेल की सज़ा हुई।

यह फ़र्क़ समझना मुश्किल है। जिसे गोली चलाने वाला बताया गया, उसे चौदह साल मिले। लाहिड़ी, जिन्हें नेता बताया गया, को मौत की सज़ा मिली। हमारे पास जो स्रोत हैं, वे नहीं बताते कि सज़ाओं में इतना फ़र्क़ क्यों था।

जो हमें नहीं पता

अहमद अली के बारे में हम ख़ुद बहुत कम जानते हैं। उनका नाम लेने वाले दोनों स्रोत बस इतना कहते हैं कि वे वकील थे और उस गाड़ी में यात्री थे।

यह क्यों मायने रखता है

जब हम काकोरी को याद करते हैं, तो हम नौजवानों की दिलेरी और उनके अंत का दर्द याद करते हैं। पर उस रात अहमद अली ने भी अपनी जान खोई।

अतीत की एक अच्छी कहानी दोनों बातों को साथ रख सकती है। वह गोली चलने की तारीफ़ नहीं करती, और वह यह भी नहीं जताती कि मौत हुई ही नहीं।

इस पर बात कीजिए

1. अहमद अली को चेतावनी मिली थी, फिर भी वे नीचे उतरे। इससे हमें उनके सोचने या करने के बारे में क्या पता चल सकता है?
2. जिसे गोली चलाने वाला बताया गया, उसे चौदह साल मिले; जिसे नेता बताया गया, उन लाहिड़ी को फाँसी की सज़ा मिली। क्या यह उचित लगता है? तय करने के लिए आपको क्या जानना होगा?

काकोरी से बच निकलने वाला

दस नौजवानों ने लखनऊ के पास एक रेलगाड़ी रोककर सरकारी पैसा ले लिया। कुछ महीनों में लगभग सभी पकड़े गए। एक कभी नहीं मिला।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

9 अगस्त 1925 को एक रेलगाड़ी छुक-छुक करती लखनऊ की ओर बढ़ रही थी। वह 8 डाउन थी, जो शाहजहाँपुर से आ रही थी।

काकोरी नाम के गाँव के पास किसी ने आपातकालीन जंजीर खींच दी। गाड़ी चीखती हुई रुक गई।

कहा जाता है कि जंजीर राजेंद्र लाहिड़ी ने खींची थी। और वे अकेले नहीं थे।

गाड़ी क्यों रोकी?

लाहिड़ी हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, यानी एचआरए, नाम के गुप्त दल के सदस्य थे। उसके नेता राम प्रसाद बिस्मिल थे। यह दल अंग्रेजों को ताकत के बल पर भारत से निकालना चाहता था।

इसके लिए उन्हें पैसे की ज़रूरत थी। हथियार खरीदने और पर्चे छापने के लिए।

बिस्मिल को पता था कि इस गाड़ी में गार्ड के डिब्बे में पैसों के थैले जाते हैं। वह पैसा अंग्रेज़ सरकार ने वसूला था। इसलिए दल को लगा कि असल में वह भारत का ही पैसा है। उन्होंने उसे लेने का फैसला किया।

लूट

क़रीब दस नौजवान इसमें शामिल थे। उनमें से एक उन्नीस साल का था। उसका नाम चंद्रशेखर आज़ाद था।

वे गार्ड के डिब्बे में गए। उन्होंने पैसों का संदूक तोड़ा। एक गिनती के अनुसार उन्हें लगभग 8,000 रुपये मिले।

फिर कुछ बुरा हो गया। अहमद अली नाम के एक वकील, जो यात्री थे, गाड़ी से नीचे उतर आए थे। ग़लती से एक गोली चल गई और वे मारे गए। क्रांतिकारियों का इरादा किसी को चोट पहुँचाने का नहीं था। पर अब एक आदमी मर चुका था।

□ **एचआरए:** हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, 1924 में बना एक गुप्त दल। 1928 में वह एचएसआरए बन गया और आज़ाद उसके नेता बने।

बड़ी तलाश

अंग्रेज़ गुस्से से भर गए। यह सिर्फ़ एक लूट नहीं थी। यह उनके राज को चुनौती थी।

पुलिस ने बहुत बड़ी तलाश शुरू की। 26 सितंबर 1925 को उसने दल के कई लोगों को एक ही बार में गिरफ्तार कर लिया। बिस्मिल शाहजहाँपुर में पकड़े गए। अशफ़ाक़उल्ला ख़ान एक साल से ज़्यादा समय तक बचे रहे, पर दिसंबर 1926 में दिल्ली में पकड़े गए।

मुक़दमा बहुत लंबा चला। 1927 में चार आदमियों को फाँसी की सज़ा सुनाई गई: राम प्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, राजेंद्र लाहिड़ी और रोशन सिंह। चारों को दिसंबर 1927 में फाँसी दी गई।

ख़ाली कुर्सी

पर अदालत में एक नाम गायब था।

चंद्रशेखर आज़ाद खिसक गए थे। वे दल के उन गिने-चुने लोगों में से थे जो कभी गिरफ्तार नहीं हुए।

उन्होंने यह कैसे किया? वे चुपचाप एक जगह से दूसरी जगह जाते रहे। वे अपना नाम और कपड़े बदलते रहे। काफ़ी समय तक वे साधु का भेष बनाकर झाँसी के पास छिपे रहे।

पुलिस ढूँढ़ती रही। फिर भी कोई उन्हें पकड़ न सका।

आगे क्या हुआ

आज़ाद अब दल के आखिरी आज़ाद नेताओं में से थे। उन्होंने हार नहीं मानी। 1928 में उन्होंने नए नौजवान साथियों के साथ दल को फिर से खड़ा करने में मदद की। उनमें से एक भगत सिंह थे।

काकोरी के लिए फाँसी पाने वाले दोस्तों ने अपना सपना सच होते नहीं देखा। पर जो बच निकला, उसने उस सपने को आगे बढ़ाया।

इस पर बात कीजिए

1. आज़ाद कभी पकड़े नहीं गए। कहानी के अनुसार, आपको क्या लगता है यह कैसे मुमकिन हुआ?
2. यह अध्याय कहता है कि फाँसी पाने वाले दोस्तों ने अपना सपना सच होते नहीं देखा, पर जो बच निकला, उसने उसे आगे बढ़ाया। इसका क्या मतलब है?

मामले में, पर गाड़ी पर नहीं

रोशन सिंह को काकोरी मामले में फाँसी की सज़ा मिली। पर किताबें कहती हैं कि वे काकोरी में थे ही नहीं।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

रोशन सिंह का नाम काकोरी से जुड़ा है। फिर भी हमारे दो स्रोत कहते हैं कि वे उस रात गाड़ी पर थे ही नहीं।

ऐसा कैसे हो सकता है कि किसी आदमी को काकोरी मामले में फाँसी की सज़ा मिले और वह काकोरी में था ही नहीं?

गाड़ी से बड़ा एक मामला

हम में से ज़्यादातर लोग काकोरी मामले को एक रेलगाड़ी की कहानी के रूप में जानते हैं, जो 9 अगस्त 1925 को रोकी गई। पर लखनऊ की अदालत ने इससे ज़्यादा देखा था।

इलाहाबाद हाई कोर्ट का इतिहास चार डकैतियों की सूची देता है, जो इस मामले में लाई गई थीं।

- **बमरौली**, 25 दिसंबर 1924 को। इतिहास कहता है कि एक पहलवान ने लुटेरों का सामना किया तो उसे गोली मार दी गई।
- **बिचपुरी**, 9 मार्च 1925 को। एक व्यक्ति की जान गई।
- **द्वारकापुर**, 25 मई 1925 को। एक गाँववाले की जान गई।
- **काकोरी**, 9 अगस्त 1925 को।

□ **लूट**: यहाँ इसका मतलब है आदमियों के एक गिरोह का किसी जगह या रेलगाड़ी पर हमला करके पैसा लूटना। इसके लिए पुराना शब्द "डकैती" था।

इसलिए काकोरी का मामला चारों के बारे में था। उसका नाम आखिरी वाली घटना पर पड़ा, क्योंकि वही सबसे मशहूर हो गई।

रोशन सिंह के बारे में किताबें क्या कहती हैं

रोशन सिंह काकोरी की लूट के "मुख्य स्थान" पर मौजूद ही नहीं थे। उन्होंने उसमें हिस्सा नहीं लिया।

उन्हें जनवरी 1926 में बमरौली की लूट के दौरान हुई एक हत्या के लिए गिरफ़्तार किया गया और उन पर मुक़दमा चला।

जज हैमिल्टन के शब्द नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब में छपे हैं। उनमें लिखा है कि बमरौली में रोशन "नेता थे, क्योंकि वे उस गाँव के बारे में सब कुछ जानते थे"। यह भी लिखा है कि "दो लोगों ने बताया है कि उस दिन वे पिस्तौल लिए हुए थे।"

इसी आधार पर जज ने उन्हें क़ानून की धारा 396 के तहत फाँसी की सज़ा सुनाई। जज हैमिल्टन ने अपना फ़ैसला 6 अप्रैल 1927 को सुनाया।

🕒 **स्रोत कहाँ अलग हैं**

दो बातें अलग रखिए: रोशन सिंह को सज़ा उस बात के लिए मिली जो जज के अनुसार बमरौली में हुई थी। यह काकोरी की गाड़ी पर होने से अलग बात है। हमने न फ़ैसला पढ़ा है, न गवाहों के बयान। हम वही शब्द इस्तेमाल करते हैं जो किताब में छपे हैं।

बमरौली में एक मौत

बमरौली में एक आदमी मारा गया। हमें यह साफ़ कहना चाहिए। सज़ा उसी मौत के लिए थी।

किताब कहती है कि बहुत-से लोगों को रोशन सिंह की सज़ा बहुत कठोर लगी। उसमें लिखा है कि वे अभियुक्तों में सबसे बड़ी उम्र के थे और उनकी भूमिका सबसे छोटी थी। यह किताब के लेखक की राय है।

हमारे पास इसे जाँचने का कोई तरीक़ा नहीं है। अदालतें, लेखक और दूसरे लोग एक ही घटना को अलग-अलग तरह से देख सकते हैं।

अंत

रोशन सिंह को 19 दिसंबर 1927 को इलाहाबाद जेल में फाँसी दी गई। नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब और विकिपीडिया इस पर एकमत हैं।

राम प्रसाद बिस्मिल और अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को उसी दिन दूसरी जेलों में फाँसी दी गई।

यह क्यों मायने रखता है

"काकोरी मामला" जैसा नाम एक छोटा-सा लेबल है। वह छिपा सकता है कि उसके अंदर कितनी घटनाएँ थीं।

जब हम किसी व्यक्ति के बारे में पढ़ें, तो दो सवाल पूछना अच्छा होता है। उस पर आरोप क्या था? और रिकॉर्ड क्या दिखाते हैं?

इस पर बात कीजिए

1. काकोरी मामले में किसी आदमी को सज़ा मिले और वह काकोरी में ही न रहा हो, यह कैसे हो सकता है?
2. कहानी इतिहास के किसी भी व्यक्ति के बारे में पूछे जाने वाले दो सवाल बताती है। वे क्या हैं?

गाड़ी से पहले: तीन लूटें जो ग़लत हो गईं

काकोरी इस मामले की पहली लूट नहीं थी। गाँव के घरों की तीन पहले की लूटों में तीन जानें गईं और पैसा बहुत थोड़ा मिला। उनके बाद दल ने अपनी योजना बदली।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

काकोरी रेल एक्शन 9 अगस्त 1925 को हुआ। यह तारीख ज़्यादातर लोग जानते हैं। कम लोग जानते हैं कि इस मामले में वह चौथी लूट थी, पहली नहीं।

अदालत ने पूरे मामले को "काकोरी ट्रेन डकैती और षड्यंत्र केस" कहा। जजों ने चार लूटों को एक साथ देखा। उनमें से तीन गाड़ी से पहले हुईं। तीनों गाँवों में अमीर लोगों के घरों में हुईं। हर एक में किसी की जान गई।

▣ **डकैती:** गिरोह की लूट। पुराने क़ानून में जिस डकैती में किसी की जान जाती, उसकी सज़ा बहुत कड़ी होती थी।

तीन घर

इलाहाबाद हाई कोर्ट का इतिहास उन्हें इस तरह गिनाता है।

बमरौली। यह क्रिसमस की रात, 25 दिसंबर 1924 को, पीलीभीत ज़िले में हुई। घर एक अमीर साहूकार का था, जिसकी चीनी की मिल भी थी। एक पहलवान ने लुटेरों का सामना किया। उसे गोली मार दी गई।

बिचपुरी। यह भी पीलीभीत में हुई। अदालत का इतिहास तारीख 9 मार्च 1925 बताता है। घर एक अमीर आदमी का था। एक व्यक्ति मारा गया।

द्वारकापुर। यह प्रतापगढ़ ज़िले में हुई। अदालत का इतिहास तारीख 25 मई 1925 बताता है। घर एक अमीर आदमी का था। एक गाँववाले की जान गई।

🕒 **स्रोत कहाँ अलग हैं**

दो बातें: तारीखें हर जगह एक जैसी नहीं हैं। हिंदी का बयान कहता है कि बिचपुरी 7 मार्च को हुई और द्वारकापुर 24 मई को। अंग्रेज़ी विकिपीडिया द्वारकापुर 24 मई को बताता है और बमरौली के लिए 25 दिसंबर 1924 देता है। हम अदालत का इतिहास मानते हैं। दिन बहुत पास-पास हैं, पर हम नहीं कह सकते कि कौन-से ठीक हैं।

दल ने क्या सीखा

हिंदी का बयान कहता है कि बिचपुरी और द्वारकापुर से बहुत थोड़ा पैसा मिला, और दोनों में एक-एक जान गई।

उसमें लिखा है कि इन दो लूटों के बाद राम प्रसाद बिस्मिल ने एक बात तय की। अब से दल सिर्फ सरकारी पैसा लूटेगा। वह दोबारा अमीर भारतीयों की संपत्ति नहीं लेगा।

बिस्मिल ने अपनी ज़बान से भी ऐसी ही वजह बताई। उन्होंने दोस्तों से कहा कि अगर वे सरकार को लूटेंगे, तो उन्हें अपने ही लोगों को नुकसान नहीं पहुँचाना पड़ेगा।

इसीलिए अगला निशाना रेलगाड़ी थी। सरकार का पैसा गार्ड के डिब्बे में एक लोहे की तिजोरी में ले जाया जाता था।

बमरौली में कौन था?

अदालतों ने इन चारों लूटों को एक ही मामला माना। यह उन लोगों में से एक के लिए मायने रखता है जिन्हें फाँसी हुई।

ठाकुर रोशन सिंह काकोरी में गाड़ी पर नहीं थे। अंग्रेज़ी विकिपीडिया कहता है कि उन्होंने उसमें हिस्सा नहीं लिया। नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब भी यही कहती है। उन पर मुक़दमा बमरौली में जो हुआ उसके लिए चला। किताब ऐसे शब्द छापती है जिन्हें वह जज के बताती है। उनके अनुसार रोशन सिंह ने बमरौली की लूट की अगुवाई की, क्योंकि वे गाँव को अच्छी तरह जानते थे, और दो लोगों ने कहा था कि उस दिन वे पिस्तौल लिए थे।

यानी रोशन सिंह को फाँसी की सज़ा पहले वाली लूट के लिए मिली, जिसमें एक आदमी मरा था। गाड़ी के लिए नहीं।

☞ स्रोत कहाँ अलग हैं

तय नहीं: कहा जाता है कि सरकार की एक किताब, "डिक्शनरी ऑफ़ मार्टर्स", रोशन सिंह को गाड़ी वाली कार्रवाई का हिस्सा बताती है। हम वह किताब खोल नहीं सके। विकिपीडिया और नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती हैं कि वे वहाँ नहीं थे। हम इन्हीं दोनों को मानते हैं, और यह खुलकर कहते हैं।

यह क्यों मायने रखता है

काकोरी को एक साफ़ मक़सद वाली दिलेर योजना के रूप में याद किया जाता है। अदालत का रिकॉर्ड एक कठिन तस्वीर दिखाता है। गाड़ी से पहले गाँव के घरों में तीन लूटें हुईं। तीन लोग मारे गए।

नौजवानों के देशप्रेम को याद करना ठीक है। उन तीन गाँववालों को याद करना भी ठीक है। निष्पक्ष ढंग से सुनाई गई कहानी दोनों को नज़र में रखती है।

इस पर बात कीजिए

1. गाड़ी से पहले की लूटों में तीन गाँववाले मारे गए। उन्हें भी याद रखना क्यों ठीक है?
2. बिचपुरी और द्वारकापुर के बाद बिस्मिल ने क्या तय किया?

तीसरा अंक

तलाश

काकोरी, लखनऊ और पूरे उत्तर भारत में, 1925 से 1927

दो दिन बाद उर्दू में हाथ से एक पुलिस रिपोर्ट लिखी गई। उसमें कहा गया कि बीस से पच्चीस अज्ञात आदमियों ने एक रेलगाड़ी लूटी। असल में वे लगभग दस थे। पुलिस को अभी उनके नाम नहीं पता थे।

सितंबर 1925 में गिरफ्तारियाँ शुरू हुईं। लखनऊ में एक बड़ा मुकदमा चला, और एक दूसरा उस आदमी पर जो एक साल से ज़्यादा समय तक बच निकला था।

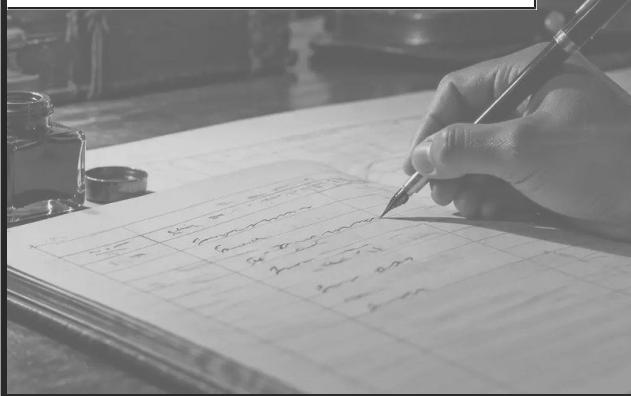


उर्दू में एक पन्ना

11 अगस्त 1925। दो दिन बाद काकोरी थाने में लूट की रिपोर्ट दर्ज होती है।

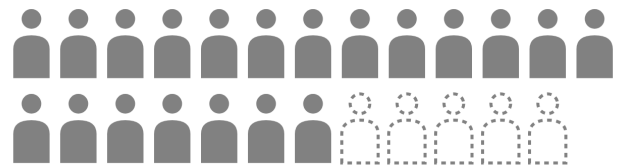


1925 में यहाँ पुलिस की रिपोर्टें उर्दू में लिखी जाती थीं। बाद में किसी ने उसका हिंदी में अनुवाद किया और अनुवाद उसके साथ लगा दिया।



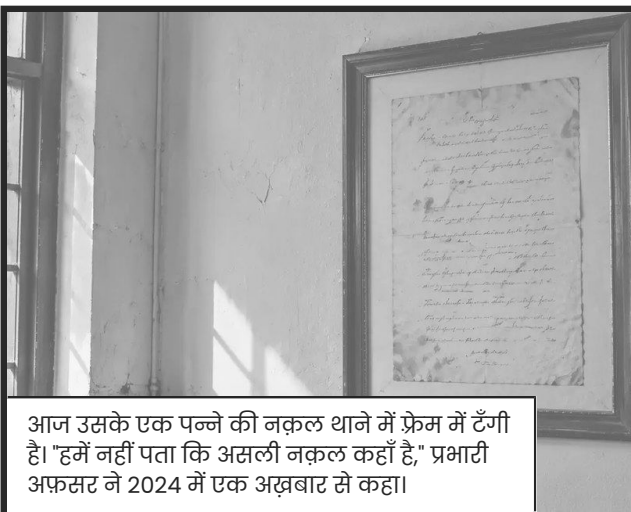
रिपोर्ट में क्या था

20 से 25 अज्ञात आदमी

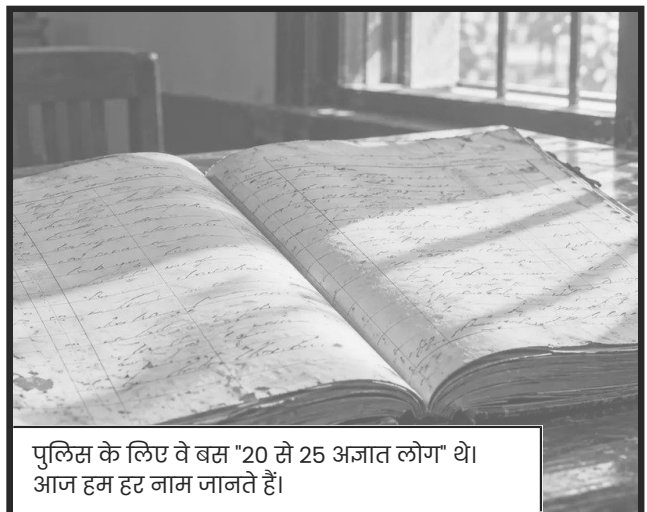


रिकॉर्ड क्या दिखाते हैं

लगभग दस



आज उसके एक पन्ने की नक़ल थाने में फ्रेम में टँगी है। "हमें नहीं पता कि असली नक़ल कहाँ है," प्रभारी अफ़सर ने 2024 में एक अख़बार से कहा।



पुलिस के लिए वे बस "20 से 25 अज्ञात लोग" थे। आज हम हर नाम जानते हैं।

दृश्य दिखाने के लिए एआई से बनाई गई तस्वीरें। ये फ़ोटो नहीं हैं। कैप्शन और शब्द अध्याय "उर्दू में लिखी पुलिस रिपोर्ट" से आते हैं। कोई चेहरा गढ़ा नहीं गया है।

काकोरी थाना • 11 अगस्त 1925 को रिपोर्ट • उर्दू में लिखी • बाद में हिंदी में अनूदित

अध्याय 9 • पुलिस • 11 अगस्त 1925, और आज

उर्दू में लिखी पुलिस रिपोर्ट

काकोरी रेल लूट के दो दिन बाद उर्दू में हाथ से एक पुलिस रिपोर्ट लिखी गई। लगभग सौ साल बाद भी उसका एक धुँधला पन्ना काकोरी थाने में फ्रेम में टँगा है।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

लखनऊ के पास एक छोटे-से पुलिस थाने की दीवार पर एक फ़ोटो-फ्रेम टँगा है। उसमें तस्वीर नहीं है। उसमें पुराने कागज़ का एक पन्ना है, पीला और धुँधला।

यह एक पुलिस रिपोर्ट का हिस्सा है। इसे लगभग सौ साल पहले लिखा गया था, भारत के इतिहास की सबसे मशहूर लूटों में से एक के बारे में।

काकोरी में क्या हुआ

9 अगस्त 1925 की शाम 8 डाउन नाम की रेलगाड़ी लखनऊ की ओर जा रही थी। वह अंग्रेज़ सरकार का पैसा ले जा रही थी।

काकोरी नाम के गाँव के पास किसी ने आपातकालीन ज़ंजीर खींच दी। गाड़ी रुक गई। नौजवान क्रांतिकारियों के एक दल ने गार्ड के डिब्बे से सरकारी पैसों के थैले ले लिए।

नेता राम प्रसाद बिस्मिल थे। उनके साथ नौ और लोग थे, जिनमें अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, राजेंद्र लाहिड़ी और नौजवान चंद्रशेखर आज़ाद भी थे।

लूट ठीक योजना के अनुसार नहीं हुई। अहमद अली नाम के एक यात्री गाड़ी से नीचे उतर आए थे। उन्हें गोली लगी और वे मारे गए।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

दो बातें: हिंदुस्तान टाइम्स की रिपोर्ट इसे अनजाने में चली गोली कहती है। विकिपीडिया के अनुसार गोली नौजवानों में से एक, मन्मथनाथ गुप्त, ने चलाई थी।

रिपोर्ट

दो दिन बाद, 11 अगस्त 1925 को, काकोरी थाने में लूट की रिपोर्ट दर्ज हुई। रिपोर्ट सरकार की ओर से, रेलवे के एक अफसर के ज़रिए आई थी।

□ **एफ़आईआर:** फ़र्स्ट इन्फ़ॉर्मेशन रिपोर्ट। किसी जुर्म के बारे में पुलिस जो सबसे पहली लिखित रिपोर्ट बनाती है, उसे यह कहते हैं।

1925 में भारत के इस हिस्से में पुलिस की रिपोर्टें उर्दू में लिखी जाती थीं। इसलिए यह भी उर्दू में लिखी गई। बाद में किसी ने उसका हिंदी में अनुवाद किया और उसके साथ लगा दिया।

रिपोर्ट में क्या लिखा है

रिपोर्ट के कुछ हिस्से इतने धुंधले हो गए हैं कि पढ़े नहीं जा सकते। रिपोर्ट का नंबर तक खो चुका है। पर हिंदी अनुवाद में हर वह बात दी गई है जो पढ़ी जा सकती थी।

उसमें लिखा है कि 20 से 25 अज्ञात लोगों ने गाड़ी लूटी। असल में वे सिर्फ़ दस के करीब थे। पुलिस को अभी तक यह नहीं पता था कि वे कौन थे।

लूट की ख़बर सबसे पहले चलती गाड़ी से ही पुलिस को भेजी गई थी, उसमें लगी संदेश भेजने वाली एक मशीन के ज़रिए।

जुर्म भारतीय दंड संहिता की धारा 396 में दर्ज है। यह "हत्या के साथ डकैती" का क़ानून है: पाँच या उससे ज़्यादा लोगों के गिरोह की ऐसी लूट, जिसमें किसी की जान जाए।

और रिपोर्ट में लूटी गई रक़म बहुत ठीक-ठीक दी गई है: 4,601 रुपये, 15 आने और 6 पाई।

□ **आने और पाई:** उन दिनों एक रुपये के 16 आने होते थे और हर आने की 12 पाई। इसलिए 15 आने 6 पाई लगभग एक और रुपये के बराबर थे।

⊗ **स्रोत कहाँ अलग हैं**

कितना पैसा?: रिपोर्ट कहती है 4,601 रुपये, 15 आने और 6 पाई। इलाहाबाद हाई कोर्ट का इस मामले का इतिहास 4,553 रुपये, 3 आने और 6 पाई देता है। विकिपीडिया बहुत बड़ी रक़म देता है, लगभग 8,000 रुपये। इनमें से कोई भी इस फ़र्क़ को नहीं समझाता।

पुराने रजिस्टर में मिली

कुछ साल पहले हिंदुस्तान टाइम्स के एक संवाददाता ने वह रिपोर्ट देखने की माँग की। काकोरी थाने के पुलिसवालों ने घंटों पुरानी फ़ाइलें खँगालीं। आखिर उन्हें 1925 का रजिस्टर मिला। उसकी हालत ख़राब थी। पन्ने फटे और पीले थे, और उर्दू की लिखावट धुँधली पड़ रही थी।

उसके अंदर रेल लूट की रिपोर्ट थी, हिंदी अनुवाद के साथ।

आज उसके एक पन्ने की नक़ल थाने में फ़्रेम में टँगी है। प्रभारी अफ़सर ने 2024 में अख़बार से कहा, "यह पूरी नक़ल नहीं है, सिर्फ़ एक पन्ना बचा है। हमें नहीं पता कि असली नक़ल कहाँ है।"

काकोरी थाना ख़ुद लूट से भी पुराना है। वह 1903 में खुला था।

आगे क्या हुआ

रिपोर्ट यह नहीं बताती कि मामला कैसे खत्म हुआ। करीब चालीस लोग गिरफ्तार हुए। लंबे मुकदमे के बाद चार आदमियों को फाँसी की सज़ा मिली: राम प्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, राजेंद्र लाहिड़ी और रोशन सिंह। बहुत-से और लोग जेल भेजे गए।

यह क्यों मायने रखता है

यह रिपोर्ट उन लोगों ने लिखी थी जिन्होंने जुर्म देखा था और जिन्हें अभी उसके पीछे के नाम नहीं पता थे। उनके लिए वे बस "20 से 25 अज्ञात लोग" थे।

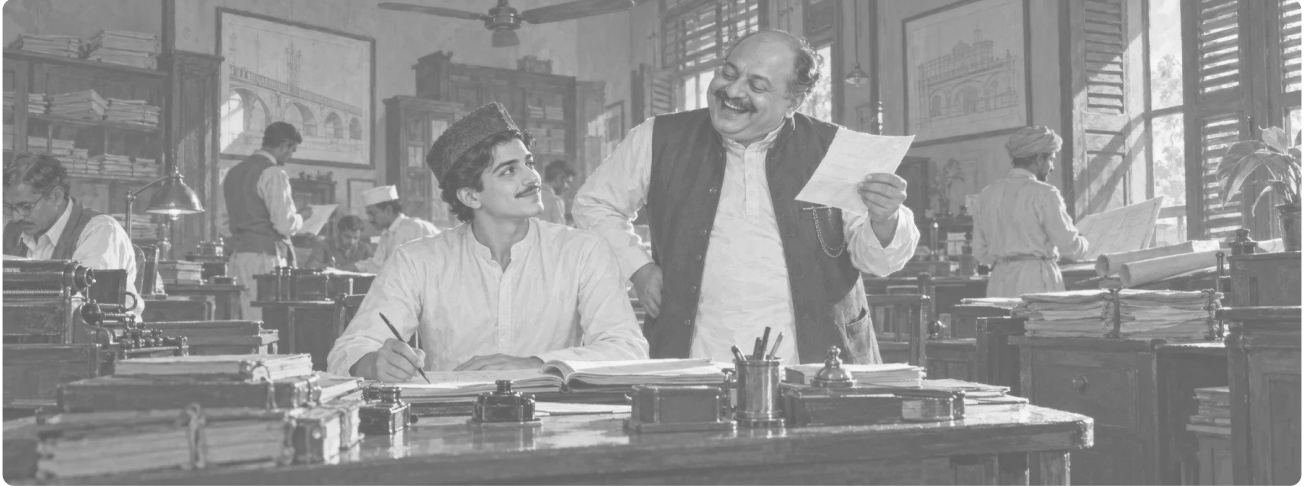
आज हम उन सबके नाम जानते हैं, और भारत उन्हें आज़ादी के सेनानियों के रूप में याद करता है। उर्दू का एक धुँधला पन्ना हमें याद दिलाता है कि यह सब कैसे शुरू हुआ: एक आम पुलिस केस की तरह, एक आम पन्ने पर, लखनऊ के पास एक छोटे-से थाने में।

इस पर बात कीजिए

1. पहली पुलिस रिपोर्ट उर्दू में क्यों लिखी गई थी?
2. रिपोर्ट कहती है कि 20 से 25 अज्ञात लुटेरे थे। असल में लगभग दस थे। इससे शुरुआती पुलिस रिपोर्टों के बारे में क्या पता चलता है?

मथुरा का क्लर्क

काकोरी लूट के बाद दल के बाक़ी सब सदस्य पकड़े गए। अशफ़ाक़उल्ला ख़ान गन्ने के खेत में छिपे, अपना नाम बदला और एक दफ़्तर में नौकरी करने लगे। फिर उन्होंने ग़लत दोस्त पर भरोसा कर लिया।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

अगस्त 1925 की काकोरी रेल लूट के बाद अंग्रेज़ पुलिस उन नौजवानों को ढूँढ़ती फिर रही थी जिन्होंने यह किया था।

सितंबर 1925 में उसने उनमें से बहुतों को एक ही बार में गिरफ़्तार कर लिया। अक्टूबर में उसने नेता राम प्रसाद बिस्मिल को शाहजहाँपुर में पकड़ लिया।

पर शाहजहाँपुर का एक आदमी उनकी पकड़ से निकल गया। वह बिस्मिल का सबसे करीबी दोस्त, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, था।

गन्ने का खेत

शुरू में अशफ़ाक़ ज़्यादा दूर नहीं गए। वे अपने घर से लगभग आधा मील दूर एक गन्ने के खेत में छिप गए।

गन्ना आदमी से भी ऊँचा उगता है। घने खेत में कोई छिप सकता है और सड़क से दिखाई नहीं देता।

पुलिस पूरे शहर में फैली हुई थी। इसलिए उनके दोस्त दिन में उनसे मिलने नहीं जा सकते थे। वे उन्हें खाना सिर्फ़ रात को भेजते थे।

नया नाम, नई नौकरी

अशफ़ाक़ जानते थे कि वे हमेशा खेत में छिपे नहीं रह सकते। उन्हें बहुत दूर जाना था।

वे पूरब की ओर गए, डाल्टनगंज नाम के शहर में, जो आज झारखंड में है। वहाँ उन्हें एक इंजीनियरिंग कंपनी में क्लर्क की नौकरी मिल गई।

उन्होंने अपना असली नाम इस्तेमाल नहीं किया। उन्होंने लोगों से कहा कि वे मथुरा के एक किसान परिवार से हैं। किसी ने अंदाज़ा नहीं लगाया कि यह चुप रहने वाला क्लर्क भारत के सबसे वांछित आदमियों में से एक है।

□ **क्लर्क:** दफ़्तर में काम करने वाला आदमी, जो चिट्ठियाँ लिखता है, हिसाब रखता है और कागज़ फ़ाइल करता है।

कविता पसंद करने वाला मालिक

यहाँ एक हैरानी की बात हुई। कंपनी के मालिक को उर्दू कविता बहुत पसंद थी, खासकर उन छोटे शेरों को।

अशफ़ाक़ तो कवि थे ही। जब उनके मालिक ने उनके शेर सुने तो वे खुश हो गए। एक जीवनी के अनुसार उसने अशफ़ाक़ की तनख़्वाह भी बढ़ा दी।

कुछ समय तक अशफ़ाक़ एक अजीब दोहरी ज़िंदगी जीते रहे। दिन में वे मथुरा के एक क्लर्क थे। दिल में वे अब भी क्रांतिकारी थे।

घर का एक दोस्त

कुछ महीनों बाद अशफ़ाक़ दिल्ली गए। उन्हें उम्मीद थी कि वे भारत छोड़कर विदेश जाने का कोई रास्ता निकाल लेंगे।

दिल्ली में उन्हें शाहजहाँपुर का एक जान-पहचान का आदमी मिला। दोनों पठान थे। वे साथ स्कूल में पढ़े थे। अशफ़ाक़ ने उस पर भरोसा किया और उससे मदद माँगी।

यही ग़लती थी। उस दोस्त ने पुलिस के पास जाकर बता दिया कि अशफ़ाक़ कहाँ हैं।

पुलिस आई और अशफ़ाक़ गिरफ़्तार हो गए।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

वे कब पकड़े गए?: ज़्यादातर स्रोत कहते हैं कि अशफ़ाक़ को दिल्ली में 7 दिसंबर 1926 को गिरफ़्तार किया गया। एक बयान 17 जुलाई 1926 बताता है। हम पक्का नहीं कह सकते कि कौन-सा सही है।

जिसे वे तोड़ नहीं सके

गिरफ़्तारी के बाद पुलिस ने बहुत कोशिश की कि अशफ़ाक़ अपने दोस्तों के खिलाफ़ गवाही दें। ऐसा करने से उनकी जान बच जाती।

उन्होंने इनकार कर दिया।

उन पर दल के एक और सदस्य, सर्चींद्रनाथ बख़्शी, के साथ मुक़दमा चला। जज ने बख़्शी को उम्रकैद की सज़ा दी। अशफ़ाक़ को उसने फाँसी की सज़ा सुनाई।

जो आदमी एक साल से ज़्यादा समय तक बचता रहा, वह इससे नहीं बच सका।

इस पर बात कीजिए

1. अशफ़ाक़ का मालिक उर्दू कविता का शौकीन था और उसने उनकी तनख़्वाह बढ़ा दी। इससे उनकी दोहरी ज़िंदगी के बारे में क्या पता चलता है?
2. घर के एक दोस्त ने उन्हें पकड़वा दिया। अशफ़ाक़ की जगह आप होते तो क्या करते?

लखनऊ का लंबा मुकदमा

काकोरी रेल कार्रवाई के बाद चौबीस लोगों पर मुकदमा चला। इसमें लगभग दो साल, दो अदालतें और दो मुकदमे लगे। यह कैसे चला, और पुराने रिकॉर्ड कहाँ एकमत नहीं हैं, यहाँ पढ़िए।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

9 अगस्त 1925 की रात काकोरी के पास एक गाड़ी रोकी गई और सरकारी तिजोरी तोड़ी गई। कुछ हफ्तों बाद पुलिस ने पूरे उत्तर भारत में लोगों को गिरफ्तार करना शुरू किया।

अदालत में उन लोगों के साथ क्या हुआ, यह एक लंबी कहानी है। इसमें एक जज है, एक मशहूर सरकारी वकील है, बहुत-से वकील हैं, और दो अलग-अलग मुकदमे हैं। इसमें बहुत-से आँकड़े भी हैं, और पुराने रिकॉर्ड उन पर हमेशा एकमत नहीं होते। यह कहानी बताती है कि हम क्या जानते हैं, और स्रोत कहाँ अलग हो जाते हैं।

पुलिस ने इसे साज़िश क्यों समझा

शुरू में पुलिस के सामने बस एक लूट सुलझाने की थी। फिर उसने कुछ देखा। कई जुर्म की जगहों पर मिले पिस्तौल और गोलियाँ एक जैसे लगते थे। और गाड़ी रोककर लूटना बहुत असामान्य बात थी।

इसलिए पुलिस ने तय किया कि यह एक लूट नहीं थी। यह एक योजना थी। लखनऊ अदालत के बारे में इलाहाबाद हाई कोर्ट का इतिहास कहता है कि एक वरिष्ठ जासूस को एक बड़ा गुप्त दल मिला। उसके ज़्यादातर सदस्य नौजवान थे। कुछ किशोर थे और कुछ विद्यार्थी। अदालत के शब्दों में उनका मकसद हथियारबंद क्रांति से "संयुक्त राज्य भारत का एक संघीय गणराज्य" बनाना था।

पुलिस को कुछ कागज़ भी मिले। एक पर्चा था जो उसके अनुसार सरकारी आतंक के खिलाफ़ था। दूसरा हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, यानी एचआरए, के नियम और उद्देश्य थे।

■ **साज़िश:** कई लोगों का मिलकर बनाया गया गुप्त मंसूबा। क़ानून में आपको योजना के लिए ही सज़ा मिल सकती है, उन हिस्सों के लिए भी जो आपने अंजाम न दिए हों।

गिरफ्तारियाँ

एक ही दिन, 26 सितंबर 1925 को, नौ आदमी गिरफ्तार किए गए। उनमें रोशन सिंह भी थे। राम प्रसाद बिस्मिल एक महीने बाद, 26 अक्टूबर को, शाहजहाँपुर में गिरफ्तार हुए।

पुलिस जिन लोगों को ढूँढ़ रही थी, उनमें से कुछ कभी पकड़े नहीं गए। उनमें सबसे मशहूर चंद्रशेखर आज़ाद हैं।

कुल मिलाकर चौबीस लोगों पर आरोप लगे। अदालत का इतिहास कहता है कि उन पर दो मुख्य आरोप थे। पहला, ब्रिटिश राज को खत्म करने की साज़िश। दूसरा, ऐसी लूटों में हिस्सा लेना जिनमें लोग मारे गए। ऐसी कुल चार लूटें थीं। काकोरी आखिरी थी।

कहाँ, और कितने समय तक?

इक्कीस अभियुक्तों का मुकदमा लखनऊ में, मिस्टर हैमिल्टन नाम के एक स्पेशल जज के सामने चला। एक अभियुक्त मुकदमा शुरू होने से पहले छोड़ दिया गया। दो और, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान और सचींद्रनाथ बख़्शी, अब भी फ़रार थे। उन पर मुकदमा बाद में चला।

☉ स्रोत कहाँ अलग हैं

दो बातें: मुकदमा कब शुरू हुआ? नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती है कि सुनवाई 4 जनवरी 1926 को रिंग थिएटर नाम की इमारत में शुरू हुई। वह कहती है कि वह इमारत अब लखनऊ का जनरल पोस्ट ऑफ़िस है। विकिपीडिया कहता है कि इक्कीस लोगों का मुकदमा 1 मई 1926 को शुरू हुआ। अदालत का इतिहास सिर्फ़ इतना कहता है कि मुकदमा "लगभग 8 महीने" चला। फ़ैसला 6 अप्रैल 1927 को आया। 1 मई 1926 से गिनें तो यह लगभग ग्यारह महीने होते हैं। यानी इनमें से कम-से-कम एक आँकड़ा ग़लत है।

☉ स्रोत कहाँ अलग हैं

दो बातें: एक हिंदी बयान एनुईन नाम के एक स्पेशल जज का नाम लेता है। अदालत का इतिहास, नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब और अंग्रेज़ी विकिपीडिया तीनों हैमिल्टन का नाम लेते हैं। हम उन तीनों को मानते हैं जो एकमत हैं।

वकील

सरकार ने अपना पक्ष रखने के लिए एक मशहूर वकील, पंडित जगत नारायण, को रखा। अभियुक्तों के पास बहुत कम पैसा था। अदालत का इतिहास कहता है कि लखनऊ के दो वकील, सी. बी. गुप्ता और एच. एन. मिश्र, ने शुरू से अंत तक इस मामले में दिलचस्पी ली। वे उन अभियुक्तों के लिए खड़े हुए जिनका कोई और नहीं था।

सी. बी. गुप्ता आगे चलकर उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। अंग्रेज़ी विकिपीडिया कहता है कि दूसरे वकीलों ने भी अभियुक्तों का बचाव किया, जिनमें गोविंद बल्लभ पंत भी थे।

एक हिंदी बयान अदालत के कुछ और दृश्य जोड़ता है। उसके अनुसार बिस्मिल ने अपना मुकदमा खुद अंग्रेज़ी में लड़ने की माँग की, पर अदालत ने मना कर दिया और उन्हें एक वकील दे दिया। उसके अनुसार उन्होंने एक बार सरकारी वकील से पूछा कि वह अभियुक्तों को किसी का "कर्मचारी" क्यों कहता है। ये दृश्य हमारे सिर्फ़ एक स्रोत में हैं। हम नहीं कह सकते कि ठीक-ठीक कैसे हुए थे।

फ़ैसला

6 अप्रैल 1927 को मिस्टर हैमिल्टन ने अपना फ़ैसला सुनाया। अदालत का इतिहास उसे इस तरह समेटता है:

- दो आदमी निर्दोष पाए गए।
- अठारह आदमी साज़िश के दोषी पाए गए।
- उनमें से नौ लूटों के भी दोषी पाए गए।
- तीन को फाँसी की सज़ा मिली: राम प्रसाद बिस्मिल, राजेंद्र लाहिड़ी और रोशन सिंह।

- पंद्रह को अलग-अलग लंबाई की जेल की सज़ा मिली।
- एक आदमी को मुक़दमे के लायक़ नहीं पाया गया। उसका मामला टाल दिया गया।

सर्चींद्रनाथ सान्याल को उम्रक़ैद की सज़ा मिली और मन्मथनाथ गुप्त को चौदह साल की। सबसे छोटी सज़ाएँ तीन साल की थीं।

फ़ैसला, जैसा एक किताब उसे छापती है, दो आदमियों का वर्णन करता है। लाहिड़ी के बारे में जज ने कहा कि वे नेताओं में से एक थे और "अहमद अली की मौत के ज़िम्मेदार" थे। रोशन सिंह के बारे में जज ने कहा कि वे बमरौली की लूट के नेता थे, और दो लोगों ने कहा था कि उस दिन वे पिस्तौल लिए थे।

▣ **बमरौली:** इस मामले की चार लूटों में पहली। यह 1924 की क्रिसमस की रात, पीलीभीत ज़िले में हुई थी। यह काकोरी में नहीं थी।

दूसरा मुक़दमा

अशफ़ाक़उल्ला ख़ान 7 दिसंबर 1926 को दिल्ली में गिरफ़्तार हुए। बख़्शी बाद में पकड़े गए। दोनों पर एक अलग मामले में दूसरे जज, मिस्टर जे. आर. डब्ल्यू. बेनेट, के सामने मुक़दमा चला। अशफ़ाक़उल्ला को फाँसी की सज़ा मिली। बख़्शी को उम्र भर के लिए दूर भेजे जाने की सज़ा मिली। अशफ़ाक़उल्ला ने अपील की। बख़्शी ने नहीं की।

इसीलिए आपको अलग-अलग आँकड़े पढ़ने को मिल सकते हैं। पहले मुक़दमे में तीन आदमियों को फाँसी की सज़ा मिली। चौथे, अशफ़ाक़उल्ला, को दूसरे मुक़दमे में मिली। नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती है कि चारों को साथ-साथ सज़ा हुई। अदालत का इतिहास कुछ और कहता है। हम अदालत को मानते हैं।

अपील

सज़ा पाए पंद्रह आदमियों ने लखनऊ की चीफ़ कोर्ट में अपील की। एक ने बाद में अपनी अपील वापस ले ली। सरकार ने भी अदालत से कहा कि उनमें से छह को और भारी सज़ा दी जाए।

दो जजों ने अपील सुनी। वे मुख्य न्यायाधीश सर लुइस स्टुअर्ट और जस्टिस रज़ा थे। वे मुक़दमे के जज से सहमत हुए। उन्होंने चारों फाँसी की सज़ाएँ बनाए रखीं। उन्होंने पाँच आदमियों की सज़ाएँ और भारी कर दीं।

🕒 **स्रोत कहाँ अलग हैं**

दो बातें: अदालत का इतिहास अपील के फ़ैसले की तारीख़ 11 अगस्त 1927 बताता है। अंग्रेज़ी विकिपीडिया और हिंदी बयान दोनों 22 अगस्त 1927 कहते हैं। हमारे सामने कोई अदालती रिकॉर्ड नहीं है जो इसे तय करे, इसलिए हम दोनों दिखाते हैं।

उसके बाद

बिस्मिल, लाहिड़ी, रोशन सिंह और अशफ़ाक़उल्ला को दिसंबर 1927 में फाँसी दी गई। बाक़ी कुछ अभियुक्त सालों बाद जेल से निकले और लंबी ज़िंदगी जीए। अदालत का इतिहास बताता है कि उनमें से कुछ आज़ाद भारत के जाने-माने नागरिक बने।

यह क्यों मायने रखता है

काकोरी का मुक़दमा अपने समय के सबसे बड़े मुक़दमों में से एक था। वकील, नेता और अख़बार, सब उसे देख रहे थे।

यह पुराने रिकॉर्ड पढ़ने का एक अच्छा सबक़ भी है। जज, इतिहासकार और किताबें लिखने वाले, हर कोई उसे थोड़ा अलग तरह से याद करता है। तारीखें इधर-उधर हो जाती हैं। नाम अलग-अलग तरह से लिखे जाते हैं। कुछ बातें सिर्फ़ एक लेखक से आती हैं।

इतिहास पढ़ते समय यह पूछना मदद करता है: यह कौन कह रहा है, और क्या कोई और भी यही कहता है? हमने यहाँ यही करने की कोशिश की है।

इस पर बात कीजिए

1. अध्याय उन बहुत-से आँकड़ों की सूची देता है जो पुराने रिकॉर्ड अलग-अलग देते हैं। एक चुनिए और समझाइए कि आप उसे कैसे सुलझाने की कोशिश करेंगे।
2. अभियुक्तों पर लूटों के साथ-साथ साज़िश का मुक़दमा क्यों चलाया गया?

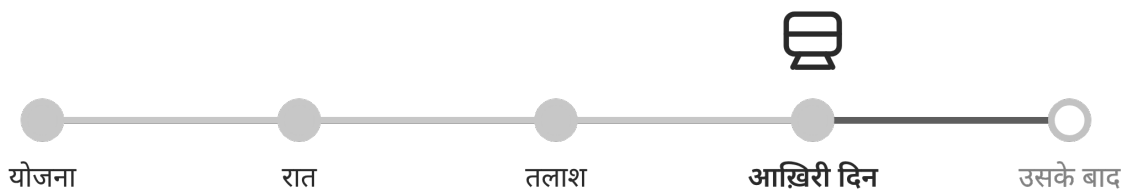
चौथा अंक

आखिरी दिन

चार जेलें, दिसंबर 1927

6 अप्रैल 1927 को जज ने अपना फैसला सुनाया। उसी साल बाद में चीफ़ कोर्ट ने फाँसी की सज़ाएँ बनाए रखीं। अपीलें गवर्नर, वायसराय और लंदन तक गईं। हर दरवाज़ा बंद रहा।

दिसंबर 1927 में चारों आदमी चार अलग-अलग जेलों में इंतज़ार कर रहे थे। ये आखिरी अध्याय उनके साथ वहाँ चलते हैं, एक-एक करके उस अपील से शुरू करके जिसने उन्हें बचाने की कोशिश की।



वायसराय के नाम अठहत्तर नाम

1927 में चार नौजवानों को काकोरी मामले में फाँसी की सज़ा मिली। कई पार्टियों के नेताओं ने, जो और बहुत-सी बातों पर एक-दूसरे से सहमत नहीं थे, उनकी जान के लिए अपील पर दस्तखत किए।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

अप्रैल 1927 में जब काकोरी का फैसला आया, तो भारत में बहुत-से लोग सन्न रह गए। तीन नौजवानों को फाँसी की सज़ा मिली थी। चौथे, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, को भी जल्द ही मिलने वाली थी।

काकोरी के कैदियों पर नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती है कि पूरा देश "स्तब्ध" था। नेताओं ने विरोध किया और केंद्रीय विधायिका के सदस्यों ने वायसराय को चिट्ठी लिखी। यह एक ऐसी अपील की कहानी है जो काम नहीं आई, और उन लोगों की जिन्होंने फिर भी वह अपील की।

वे चार कौन थे

राम प्रसाद बिस्मिल कवि थे और दल के संगठनकर्ता थे। अशफ़ाक़उल्ला ख़ान उनके करीबी दोस्त और कवि थे। राजेंद्र लाहिड़ी इतिहास के विश्वविद्यालय-विद्यार्थी थे। रोशन सिंह बाक़ी सबसे बड़ी उम्र के थे। वे गाँव के स्कूल में शिक्षक रह चुके थे।

उनके पक्ष में बोलने वाले लोग अलग-अलग पार्टियों और अलग-अलग धर्मों के थे।

पहली अपीलें

अगस्त 1927 में जब लखनऊ की चीफ़ कोर्ट ने फाँसी की सज़ाएँ बनाए रखीं, तो अगला क़दम दया की अपील थी। अगर कोई ऊँचा अधिकारी हल्की सज़ा के लिए राज़ी हो जाए तो फाँसी अब भी रुक सकती थी।

□ **सज़ा घटाना:** किसी सज़ा को हल्की सज़ा में बदल देना। फाँसी की सज़ा घटाकर उम्रक़ैद की जा सकती है।

प्रांतीय परिषद के कुछ सदस्यों ने सबसे पहले संयुक्त प्रांत के गवर्नर, सर विलियम मॉरिस, को लिखा। उन्होंने मना कर दिया।

चीफ़ कोर्ट ने अपना फ़ैसला कब दिया था? अदालत का इतिहास कहता है 11 अगस्त 1927। अंग्रेज़ी विकिपीडिया और हिंदी बयान कहते हैं 22 अगस्त। असली फ़ैसला देखा नहीं गया, इसलिए दोनों तारीखें दी गई हैं।

वायसराय और ज़ापन

अगली अपील और ऊपर गई, वायसराय लॉर्ड इरविन तक। यह मदन मोहन मालवीय का एक ज़ापन था, यानी औपचारिक अर्ज़ी, जिस पर केंद्रीय विधायिका के 78 सदस्यों ने दस्तख़त किए थे। तीन स्रोत यही संख्या बताते हैं।

दस्तख़त करने वालों में खुद मालवीय, मुहम्मद अली जिन्ना, एन. सी. केलकर, लाला लाजपत राय और गोविंद बल्लभ पंत भी थे।

ज़रा उस सूची के बारे में सोचिए। मालवीय और जिन्ना अलग-अलग धर्मों और अलग-अलग पार्टियों के थे। इस एक मामले में उनके नाम एक ही पन्ने पर थे।

और भी जाने-माने लोगों ने अभियुक्तों के पक्ष में कहा, जिनमें मोतीलाल नेहरू और जवाहरलाल नेहरू भी थे। कुछ लेखक कहते हैं कि महात्मा गांधी ने भी दया की अपील की थी। जिन दो स्रोतों में यह बात है, वे इसे सावधानी से कहते हैं, "बताया जाता है" और "दावा किया गया", इसलिए यह एक "शायद" ही रहती है।

वायसराय ने मना कर दिया। मालवीय के नेतृत्व में पाँच लोगों का एक प्रतिनिधिमंडल फिर अधिकारियों से मिलने गया। वह भी नाकाम रहा।

मौत की कोठरी से एक चिट्ठी

9 सितंबर 1927 को राम प्रसाद बिस्मिल ने गोरखपुर जेल से मालवीय को एक चिट्ठी लिखी। दो स्रोत इसका ज़िक्र करते हैं, पर उसके शब्द हम तक नहीं पहुँचे हैं।

आखिरी दरवाज़ा: लंदन

भारतीय जिस सबसे ऊँची अदालत तक पहुँच सकते थे, वह लंदन की प्रिवी काउंसिल थी। स्वयं सम्राट से भी अर्ज़ी की जा सकती थी।

□ **प्रिवी काउंसिल:** लंदन में वरिष्ठ सलाहकारों का एक समूह। उन दिनों वह ब्रिटिश भारत के लोगों के लिए अपील की आखिरी अदालत थी।

वकील मोहन लाल सक्सेना ने अर्ज़ी लिखी। उन्होंने उसे इंग्लैंड में एस. एल. पोलाक नाम के एक आदमी को भेजा, जिसे उसे जमा करना था। आखिरी अपील 16 सितंबर 1927 की थी, और वह हेनरी पोलाक के ज़रिए प्रिवी काउंसिल और सम्राट, दोनों के पास गई।

उसे ठुकरा दिया गया।

लंदन के अफ़सरो ने बिस्मिल को ख़तरनाक पेशेवर अपराधी कहा। यह सरकार की राय थी, जैसा एक स्रोत बताता है। बाक़ी स्रोत कोई वजह नहीं देते।

जेल में ख़बर

कहा जाता है कि राजेंद्र लाहिड़ी ने 14 दिसंबर 1927 को अपने दोस्तों को एक चिट्ठी लिखी। उसमें वे कहते हैं कि एक दिन पहले उन्होंने सुना कि प्रिवी काउंसिल ने उनकी अपील ठुकरा दी। "आपने मेरी जान बचाने के लिए सब कुछ किया, पर लगता है कि देश को मेरी जान की ज़रूरत है," किताब उनके शब्द यही बताती है।

कहा जाता है कि रोशन सिंह ने 13 दिसंबर को अपने दोस्त को लिखा कि वह उनके लिए अफ़सोस न करे।

इन चिट्ठियों को असली चिट्ठियों से मिलाकर जाँचा नहीं जा सका। वे 2009 में लिखी गई एक किताब से आती हैं, यानी अस्सी साल से भी ज्यादा बाद। वे वैसी ही दी गई हैं जैसी किताब देती है, साबित हुए शब्दों के रूप में नहीं।

अपील का दूसरे लोगों पर असर

अपील चार जानों के लिए थी। पर चीफ़ कोर्ट के फैसले ने दूसरे अभियुक्तों की ज़िंदगी भी बदल दी थी। जजों ने उनमें से पाँच की सज़ाएँ और भारी कर दीं: जोगेश चंद्र चटर्जी, सुरेश चंद्र भट्टाचार्य, विष्णु शरण दुब्लिश, गोविंद चरण कर और प्रणवेश कुमार चटर्जी।

कुछ अभियुक्तों का बचाव अदालत में जाने-माने वकीलों ने किया था। दूसरों के पास अपना कोई वकील नहीं था। सी. बी. गुप्ता और एच. एन. मिश्र उन लोगों के लिए बोले जिनका कोई नहीं था।

दिसंबर के दिन

अपील नाकाम होने के बाद ब्रिटिश सरकार ने तारीखें तय कर दीं। एक स्रोत के अनुसार चारों को 16 दिसंबर तक फाँसी दी जानी थी। अंग्रेज़ी विकिपीडिया कहता है 19 दिसंबर तक।

राजेंद्र लाहिड़ी को 17 दिसंबर 1927 को गोंडा जेल में फाँसी दी गई। बाक़ी तीन को 19 दिसंबर की सुबह फाँसी हुई। बिस्मिल को गोरखपुर में। रोशन सिंह को इलाहाबाद में। अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को फ़ैज़ाबाद में।

लाहिड़ी को दो दिन पहले फाँसी क्यों दी गई? नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती है कि सरकार को डर था कि उनके दोस्त उन्हें जेल से छुड़ा लेंगे। वह कहती है कि चंद्रशेखर आज़ाद और मन्मथनाथ गुप्त इसी मक़सद से गोंडा आए थे और किसी ने योजना लीक कर दी। एक और स्रोत कोई वजह बिल्कुल नहीं देता। कोई सरकारी रिकॉर्ड देखा नहीं गया, इसलिए यह एक अप्रमाणित कहानी ही रहती है।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

एक किताब में चूक: नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती है कि अशफ़ाक़उल्ला को 1929 में फाँसी हुई। वही किताब कहती है कि बिस्मिल, जिन्हें उसी दिन फाँसी हुई, 1927 में मरे। बाक़ी सभी स्रोत 1927 कहते हैं।

फाँसी के बाद

नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब के अनुसार गोरखपुर के लोग बिस्मिल के शव को शहर में घुमाते हुए ले गए, और लोगों ने उस पर फूल और पैसे बरसाए। चारों को फाँसी होने के बाद उनके दल ने अपना नाम और अपने उद्देश्य बदल लिए। वह हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन बन गया।

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

"एसोसिएशन" क्यों?: सितंबर 1928 से पहले दल को एचआरए कहा जाता था, यानी हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन। उसके बाद वह एचएसआरए हो गया, जिसमें "सोशलिस्ट" जुड़ गया।

यह क्यों मायने रखता है

एक अपील नाकाम हो सकती है और फिर भी कुछ मायने रख सकती है। उन 78 नामों ने उन चारों की जान नहीं बचाई।

पर वे दिखाते हैं कि 1927 में लगभग हर बात पर असहमत रहने वाले लोग एक बात पर सहमत हो सके। उन्हें लगा कि ये नौजवान, उन्होंने जो भी किया हो, फाँसी के लायक नहीं हैं।

सरकार ने इसे अलग तरह से देखा। हिंदी बयान के अनुसार लंदन के अफ़सरों को लगा कि बिस्मिल इतने ख़तरनाक हैं कि उन्हें बर्खा नहीं जा सकता। दोनों नज़रिए असली थे, और दोनों इस कहानी में आते हैं।

इस पर बात कीजिए

1. मालवीय और जिन्ना अलग-अलग पार्टियों और धर्मों के थे, फिर भी दोनों ने दस्तखत किए। इससे क्या पता चलता है?
2. अपील नाकाम रही। क्या उसे करना फिर भी सार्थक था? क्यों?

दो दिन पहले

काकोरी मामले में चार आदमियों को फाँसी की सज़ा मिली। तीन को 19 दिसंबर 1927 को फाँसी हुई। राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को 17 तारीख को।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

काकोरी के लिए चार आदमियों को फाँसी की सज़ा मिली। उसी दिन, 19 दिसंबर 1927 को, उनमें से तीन को अलग-अलग जेलों में फाँसी दी गई।

चौथे राजेंद्रनाथ लाहिड़ी थे। उन्हें दो दिन पहले फाँसी दे दी गई। क्यों?

चार जेलें

6 अप्रैल 1927 को जज मिस्टर हैमिल्टन ने राम प्रसाद बिस्मिल, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और रोशन सिंह को फाँसी की सज़ा सुनाई। इलाहाबाद हाई कोर्ट का इतिहास यही कहता है। अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को अलग मुक़दमे में फाँसी की सज़ा मिली।

अपीलें हुईं। नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती है कि प्रिवी काउंसिल में भी अपील की गई और वह ठुकरा दी गई।

फिर चारों आदमी अलग-अलग जगहों पर रखे गए। बिस्मिल को गोरखपुर में फाँसी हुई, रोशन सिंह को इलाहाबाद में और अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को फ़ैज़ाबाद में। लाहिड़ी गोंडा जेल में थे।

अकेले महीने

लाहिड़ी ने अपनी ज़िंदगी के आखिरी छह महीने गोंडा और बाराबंकी की जेलों में बिताए। द वायर कहता है कि वहाँ वे बहुत अकेले थे।

उन्होंने दो चिट्ठियाँ लिखीं, जो किताब में छपी हैं। पहली में, 6 अक्टूबर को, उन्होंने उन सबको धन्यवाद दिया जिन्होंने उनके लिए अपील की थी। दूसरी में, 14 दिसंबर को, उन्होंने लिखा कि उनके दोस्तों ने उनकी जान बचाने के लिए सब कुछ किया।

हमने असली चिट्ठियाँ नहीं देखी हैं। हम वही शब्द इस्तेमाल करते हैं जो किताब में छपे हैं।

तारीख आगे खिसक गई

चारों फाँसियाँ 19 दिसंबर के लिए तय थीं। पर लाहिड़ी को दो दिन पहले, 17 दिसंबर को, गोंडा में फाँसी दे दी गई। किताब और द वायर एक ही तारीखें देते हैं।

दोनों वजह भी बताते हैं। अधिकारियों को डर था कि क्रांतिकारी लाहिड़ी को जेल से छुड़ाने की कोशिश करेंगे।

किताब कुछ और बताती है। चंद्रशेखर आज़ाद और मन्मथनाथ गुप्त गोंडा आए थे। छुड़ाने की योजना पर एक बैठक लाल बिहारी टंडन नाम के आदमी के घर हुई। किताब के अनुसार किसी ग़द्दार ने योजना बता दी, और इसीलिए लाहिड़ी को पहले फाँसी दे दी गई।

सबसे संभावित वजह जेल तोड़कर उन्हें छुड़ाने की योजना थी, जिसकी अगुवाई मन्मथनाथ गुप्त का दल कर रहा था।

☞ स्रोत कहाँ अलग हैं

पक्का नहीं: दोनों बयान वजह पर एकमत हैं। पर कोई भी जेल या सरकार का सरकारी आदेश नहीं दिखाता। लाहिड़ी पर विकिपीडिया का पन्ना कोई वजह बिल्कुल नहीं देता। हमें तारीखें पता हैं। हम वजह साबित नहीं कर सकते।

वे शब्द जिन्हें हम जाँच नहीं सकते

किताब लाहिड़ी की आखिरी रात की भी एक कहानी सुनाती है, जिसमें उनके और एक जेल अफ़सर के बीच बातचीत है। फिर वह उनके आखिरी शब्द देती है।

हमारे पास ऐसा कोई रिकॉर्ड नहीं है जिसे हम उस समय कही गई बात से मिलाकर जाँच सकें। इसलिए हमने उन्हें छोड़ दिया। बच्चों के लिए लिखे गए इतिहास में किसी के मुँह में शब्द नहीं डालने चाहिए।

उनकी उम्र के बारे में एक बात

एक बयान कहता है कि उन्हें 24 साल की उम्र में फाँसी हुई। पर उसी बयान के अपने जन्म-वर्ष 1901 के हिसाब से वे 26 साल के होते। विकिपीडिया भी कहता है कि वे 26 के थे।

अगर नेशनल बुक ट्रस्ट का साल 1892 सही है, तो वे लगभग 35 के थे। यानी अंत के समय उनकी उम्र भी तय नहीं है।

यह क्यों मायने रखता है

बहुत-से लोग इन चारों आदमियों के नाम साथ-साथ याद करते हैं। पर उनके आखिरी दिन एक जैसे नहीं थे।

एक छोटी-सी तारीख जाँचने से पता चलता है कि हमारी जानकारी में कहाँ कमी है। एक अच्छा इतिहासकार बताता है कि क्या पक्का है, और यह भी बताता है कि क्या पक्का नहीं है।

इस पर बात कीजिए

1. कहानी जानबूझकर लाहिड़ी के बताए जाने वाले आखिरी शब्द छोड़ देती है। क्या आप इस फ़ैसले से सहमत हैं? क्यों?
2. फाँसी की तारीख आगे खिसकाने की क्या वजह बताई जाती है, और कहानी क्यों कहती है कि वह साबित नहीं की जा सकती?

दिसंबर के दो हफ्ते

दिसंबर 1927 में ठाकुर रोशन सिंह इलाहाबाद की एक जेल में इंतज़ार कर रहे थे। उनकी लिखी चिट्ठी के हमारे पास दो बयान हैं, जेल के दो नाम हैं, और इस बारे में एक कहानी है कि उन्होंने अंत का सामना कैसे किया। स्रोत क्या कहते हैं, और कहाँ अलग हो जाते हैं, यहाँ पढ़िए।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

दिसंबर 1927 तक सारी अपीलें खत्म हो चुकी थीं। लखनऊ की चीफ़ कोर्ट ने फाँसी की सज़ाएँ बनाए रखी थीं। वायसराय और लंदन से की गई अर्ज़ियाँ नाकाम हो चुकी थीं।

ठाकुर रोशन सिंह इलाहाबाद की एक जेल में थे। वे 19 दिसंबर का इंतज़ार कर रहे थे। यह कहानी उन्हीं आखिरी दिनों की है। हमें इसमें सावधान रहना होगा। उनके बारे में जो कुछ हम जानते हैं, लगभग सब बाद में दूसरे लोगों ने लिखा।

जेल का नाम

उन्हें कहाँ रखा गया था? इसका जवाब इस पर निर्भर करता है कि आप किससे पूछते हैं।

उन्हें इलाहाबाद की जेल में रखा गया था, जिसे अब प्रयागराज कहते हैं।

छपे हुए स्रोतों में जेल के एक से ज़्यादा नाम हैं। अंग्रेज़ी विकिपीडिया और नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब इलाहाबाद जेल कहते हैं। लखनऊ का एक अख़बार उसे इलाहाबाद की मलाका जेल कहता है। हिंदी वेबसाइट वेबदुनिया उसे नैनी जेल और मलाका जेल भी कहती है। गरिमा टाइम्स कहता है प्रयागराज की नैनी जेल। नैनी और मलाका उस शहर की जेलों से जुड़े नाम हैं। हो सकता है ये एक ही जगह के नाम हों या एक-दूसरे के पास की दो जेलों के।

इंतज़ार

इंतज़ार के उन महीनों के कुछ छोटे-छोटे दृश्य बचे हैं।

रोशन सिंह ने जेल में बांग्ला सीखी। जब बिस्मिल ने उनसे पूछा कि अगर फाँसी होनी ही है तो इसका क्या फ़ायदा, तो उन्होंने जवाब दिया कि अगले जन्म में काम आएगी। वे एक मराठी अख़बार भी पढ़ते थे और उसमें मज़ा लेते थे।

एक दिन एक वकील आया और उसने बताया कि दया की अपील दाख़िल हो गई है। रोशन सिंह ने शांति से जवाब दिया, "ठीक है।" बाद में जेल अधीक्षक ने उन्हें बताया कि अपील ठुकरा दी गई है। उन्होंने फिर कहा, "ठीक है।"

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

सावधानी की बात: ये दृश्य 2009 में लिखी गई एक किताब से आते हैं। हमें ये किसी पुराने रिकॉर्ड में नहीं मिले। हम इन्हें वैसे ही आगे बता रहे हैं जैसे किताब बताती है।

चिट्ठी

कहा जाता है कि एक चिट्ठी बची रही है। पर उसके दो रूप हैं, दो अलग तारीख़ों के साथ।

एक रूप की तारीख 13 दिसंबर 1927 है। रोशन सिंह ने एक दोस्त को लिखा: "इसी हफ़्ते मुझे फाँसी होगी। मेरी भगवान से प्रार्थना है कि वह मेरे प्रति आपके स्नेह का फल आपको दे। आपको मेरे लिए अफ़सोस करने की ज़रूरत नहीं। मेरी मौत ख़ुशी का प्रतीक है। जो पैदा हुआ है उसे मरना है। यह जीवन का सच है।"

दूसरा रूप 6 दिसंबर का है, और वह ज़्यादा लंबा है। उसमें वे कहते हैं कि फाँसी एक हफ़्ते के भीतर होगी। वे दोस्त से कहते हैं कि वह दुखी न हो, और कहते हैं कि उनकी मौत ख़ुशी की वजह होनी चाहिए। वे कहते हैं कि जो भी पैदा होता है उसे मरना है। वे लिखते हैं कि इंसान को बुरे काम करके अपने ऊपर शर्मिंदगी नहीं लानी चाहिए, और मौत के समय भगवान को याद करना चाहिए। वे दो साल से अपने बच्चों से दूर हैं, और इस समय ने उन्हें प्रार्थना के बहुत मौक़े दिए। दुनियावी चीज़ों की उनकी चाह ख़त्म हो गई है।

वेबदुनिया के अनुसार चिट्ठी उन्हीं के लिखे एक शेर पर ख़त्म होती है। उस पंक्ति का मतलब है: रोशन, अपनी ज़िंदगी जोश से जियो, वरना यहाँ तो रोज़ बहुत-से लोग मरते ही हैं।

चिट्ठी 13 दिसंबर को लिखी गई या 6 दिसंबर को? दोनों चिट्ठियाँ अपनी बात में एक जैसी हैं। दोनों दोस्त से कहती हैं कि वह दुखी न हो। दोनों कहती हैं कि मौत हर किसी को आती है। पर वेबदुनिया की अपनी चिट्ठी में "एक हफ़्ते के भीतर" लिखा है, और 6 दिसंबर 19 दिसंबर से लगभग दो हफ़्ते पहले है। 13 दिसंबर की तारीख ज़्यादा ठीक बैठती है। कोई भी स्रोत असली चिट्ठी नहीं दिखाता। यह साफ़ नहीं है कि कौन-सी तारीख सही है, या चिट्ठियाँ दो थीं या नहीं।

सुबह

तारीख 19 दिसंबर 1927 थी। बिस्मिल को उसी सुबह गोरखपुर में और अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को फ़ैज़ाबाद में फाँसी होनी थी। लाहिड़ी को दो दिन पहले गोंडा में फाँसी हो चुकी थी।

नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब कहती है कि रोशन सिंह हाथ में भगवद्गीता लिए, चेहरे पर मुस्कान के साथ, "वंदे मातरम्" और "ॐ" पढ़ते हुए फाँसी के तख़्ते तक गए।

एक और बयान कुछ और जोड़ता है। वे पिछली रात कुछ घंटे सोए और फिर रात प्रार्थना में बिताई। सुबह उन्होंने स्नान किया, प्रार्थना की और गीता का थोड़ा-सा पाठ किया। फिर उन्होंने पहरेदार से कहा कि मुझे ले चलो। पहरेदार सोचने लगा कि यह आदमी है या देवता। उन्होंने अपनी कोठरी को प्रणाम किया, हाथ में गीता लिए फाँसी के तख़्ते तक गए, और तीन बार "वंदे मातरम्" पुकारा।

तीसरा बयान कहता है कि उन्होंने गीता का पाठ किया, और अंत का सामना करते हुए "वंदे मातरम्" पुकारा।

तीन स्रोत दो बातों पर एकमत हैं, गीता और "वंदे मातरम्" की पुकार। उसके आगे का ब्योरा हर बार सिर्फ़ एक स्रोत से आता है।

अंतिम यात्रा

वेबदुनिया कहता है कि जेल के फाटक पर हज़ारों आदमी, औरतें, नौजवान और बूढ़े इकट्ठा हुए। जब शव बाहर लाया गया तो भीड़ ने नारे लगाए। संगम तक, जहाँ गंगा और यमुना मिलती हैं, एक बड़ा जुलूस गया, और वहाँ वैदिक रीति से उनका अंतिम संस्कार हुआ।

यह बात हमें सिर्फ़ एक स्रोत में मिली। हमें नहीं पता कि कितने लोग आए थे या उन्होंने क्या किया।

जो बचा है

वेबदुनिया के अनुसार नैनी में उस जगह रोशन सिंह की एक मूर्ति थी, जहाँ कभी फाँसी का तख़्ता था। आज उस जगह एक मेडिकल कॉलेज है। मूर्ति पर चिट्ठी का वही शेर लिखा है।

गरिमा टाइम्स और एक दूसरे अख़बार, पांचजन्य, के अनुसार उनकी एक और मूर्ति उनके अपने गाँव नवादा में है। हमने इनमें से कोई मूर्ति नहीं देखी है।

यह क्यों मायने रखता है

इन आखिरी दिनों के बारे में जानना बहुत मुश्किल है। हमारे पास न कोई जेल डायरी है, न उनकी कही बातों की कोई सरकारी रिपोर्ट। जो हमारे पास है, वह किताबें और वेबसाइटें हैं, जो सालों बाद प्रशंसकों की आवाज़ में लिखी गई।

यह बेकार नहीं है। यह दिखाता है कि लोग उनके बारे में क्या याद रखना चाहते थे: एक शांत आदमी, जो प्रार्थना करता था और अपने दोस्त से कहता था कि दुखी न हो। पर एक सावधान पाठक दो स्तंभ रखता है। एक में वह जाता है जो कई स्रोत कहते हैं। दूसरे में वह जो सिर्फ़ एक स्रोत कहता है। इस कहानी ने दोनों स्तंभों को साफ़ रखने की कोशिश की है।

इस पर बात कीजिए

1. कहानी कहती है कि दो स्तंभ रखिए: जो कई स्रोत कहते हैं, और जो सिर्फ़ एक स्रोत कहता है। इसे किसी एक अंश पर आज़माइए।
2. चिट्ठी दो रूपों में है, दो तारीखों के साथ। आपको यह तय करने में क्या मदद करेगा कि कौन-सी सही है?

फ़ैज़ाबाद की आख़िरी सुबह

19 दिसंबर 1927 को एक नौजवान कवि आख़िरी बार फ़ैज़ाबाद जेल की अपनी कोठरी से बाहर निकला। उसके पास कुरान की एक प्रति थी, और वह डरा नहीं था।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

1927 में अशफ़ाक़उल्ला ख़ान फ़ैज़ाबाद जेल की एक छोटी-सी कोठरी में बैठे थे। काकोरी रेल लूट में हिस्सा लेने के लिए उन्हें फाँसी की सज़ा मिली थी।

उनके वकीलों ने अपील की। अगस्त 1927 में लखनऊ की चीफ़ कोर्ट के दो जजों, सर लुइस स्टुअर्ट और जस्टिस रज़ा, ने काकोरी मामले की अपीलें सुनीं। उन्होंने उनकी सज़ा नहीं बदली। चार आदमियों को फाँसी होनी थी: अशफ़ाक़, उनके दोस्त बिस्मिल, राजेंद्र लाहिड़ी और रोशन सिंह।

दूसरे मुकदमे में उनके साथी कैदी सर्चींद्रनाथ बख़्शी की किस्मत अच्छी थी। उन्हें उम्रकैद की सज़ा मिली।

अब कुछ और नहीं किया जा सकता था।

कोठरी में एक डायरी

अशफ़ाक़ अपनी कोठरी में अकेले थे। पर वे ख़ाली नहीं बैठे थे।

फ़ैज़ाबाद का एक स्मारक ट्रस्ट कहता है कि जेल में वे डायरी लिखते थे। उसकी एक पंक्ति अक्सर दोहराई जाती है: "सिर्फ़ अपने वतन की मुहब्बत में मैं इतना दुख सह रहा हूँ।"

🕒 स्रोत कहाँ अलग हैं

क्या डायरी असली है? स्मारक ट्रस्ट ने उसके कुछ हिस्से छापे हैं। पर इतिहासकार अब तक उन शब्दों को हाथ से लिखे असली पन्नों से जाँच नहीं पाए हैं। इसलिए हम इन्हें उनके "कहे जाने वाले" शब्द कहते हैं।

हत्यारे नहीं

अशफ़ाक़ गहरे धार्मिक आदमी थे। वे मानते थे कि खुदा जानता है कि उनके दिल में क्या है।

काकोरी की लूट के दौरान एक यात्री गलती से मारा गया था। अशफ़ाक़ नहीं चाहते थे कि लोग उन्हें हत्यारा समझें। मरने से पहले उन्होंने कहा कि उनके हाथ किसी के खून से रंगे नहीं हैं।

सुबह

तारीख़ तय हो गई: 19 दिसंबर 1927।

एक जीवनी के अनुसार उस सुबह अशफ़ाक़ जल्दी जागे। उन्होंने स्नान किया। उन्होंने नमाज़ पढ़ी। उन्होंने क़ुरान पढ़ा, जैसा वे रोज़ करते थे।

फिर पहरेदार उन्हें लेने आए।

वे एक थैला लिए अपनी कोठरी से बाहर निकले। उसके अंदर उनका क़ुरान था। वे शांति से चले।

☞ स्रोत कहाँ अलग हैं

उनके आख़िरी शब्द: किताबें इस पल को अलग-अलग तरह से बताती हैं। एक कहती है कि उन्होंने "ख़ुदा हाफ़िज़" पुकारा, जिसका मतलब है "ख़ुदा आपकी हिफ़ाज़त करे", यानी अलविदा कहने का एक तरीक़ा। दूसरी कहती है कि उन्होंने कलमा पढ़ा, जो मुसलमानों के ईमान की घोषणा है। उस समय किसी ने उनके शब्द लिखे नहीं, इसलिए हम ठीक-ठीक नहीं जान सकते।

दो दोस्त, एक दिन

अशफ़ाक़ मन से अकेले नहीं मरे। उसी सुबह उनके सबसे करीबी दोस्त, राम प्रसाद बिस्मिल, को भी, बहुत दूर गोरखपुर जेल में, फाँसी दी गई।

दो दिन पहले एक और साथी, राजेंद्र लाहिड़ी, को गोंडा में फाँसी दी गई थी। रोशन सिंह को भी 19 दिसंबर को इलाहाबाद में फाँसी हुई।

चार नौजवानों ने काकोरी मामले में अपनी जान दी।

वे क्या छोड़ गए

अशफ़ाक़ अपने पीछे मुट्ठी भर कविताएँ कुछ तस्वीरें और एक कहानी छोड़ गए।

उनका नाम आज भी उनके दोस्त के नाम के साथ लिया जाता है: बिस्मिल और अशफ़ाक़।

वे 27 साल के थे। उन्होंने अपनी ज़िंदगी का आखिरी साल जेल की कोठरी में लिखते हुए बिताया।

"सिर्फ अपने वतन की मुहब्बत में मैं इतना दुख सह रहा हूँ।"

अशफ़ाक़उल्ला ख़ान, उन शब्दों में जो उनकी जेल डायरी से बताए जाते हैं
उनके कहे जाने वाले शब्द। स्मारक ट्रस्ट ने डायरी के कुछ हिस्से छापे हैं, पर इतिहासकारों ने अब तक शब्दों
को असली पन्नों से नहीं जाँचा है।

इस पर बात कीजिए

1. अशफ़ाक़ ने कहा कि उनके हाथ किसी के खून से रंगे नहीं हैं। यह बात उनके लिए क्यों मायने रखती होगी?
2. कहानी कहती है कि उस समय किसी ने उनके आखिरी शब्द नहीं लिखे। हम क्या खोते हैं, और क्या बचा रखते हैं?

कागज़ के टुकड़ों पर लिखी कहानी

अपने आखिरी महीनों में गोरखपुर जेल की मौत की कोठरी में राम प्रसाद बिस्मिल ने चोरी-छिपे अपनी ज़िंदगी की कहानी लिखी। उन्होंने क्या बताना चुना? और किस बारे में उन्होंने अपना मन बदल लिया था?



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

सोचिए कि आपके पास जीने के लिए सिर्फ कुछ हफ्ते बचे हैं। आप जेल की कोठरी में बंद हैं। आपके पास कोई ठीक-ठाक कॉपी नहीं, बस कागज़ के टुकड़े हैं। और पहरेदारों को पता नहीं चलना चाहिए कि आप क्या लिख रहे हैं।

आप क्या लिखेंगे?

1927 में गोरखपुर जेल में राम प्रसाद बिस्मिल के सामने यही हालत थी। उन्हें काकोरी रेल लूट के लिए फाँसी की सज़ा मिली थी। और उन्होंने अपनी ज़िंदगी की कहानी लिखने का फैसला किया।

एक छिपी हुई किताब

बिस्मिल ने कागज़ के ढीले टुकड़ों पर लिखा। पन्ने चोरी-छिपे जेल से बाहर पहुँचाए गए। "हैंग्ड फ़ॉर पैट्रियटिज़्म" किताब के अनुसार उन्होंने आखिरी पन्ने 17 दिसंबर 1927 को लिखे। दो दिन बाद उन्हें फाँसी हो गई।

किताब उनकी मौत के बाद ही छपी। उसका एक हिंदी नाम "निज जीवन की छटा" है। 2025 में, लगभग सौ साल बाद, अवधेश त्रिपाठी का नया अंग्रेज़ी अनुवाद आया, जिसका नाम है "अ ग्लिम्प्स ऑफ़ माई लाइफ़" (A Glimpse of My Life)।

▣ **आत्मकथा:** किसी इंसान की ज़िंदगी की कहानी, जो उसी ने लिखी हो।

बिस्मिल ने जो बातें बताना चुना, उनमें से कुछ ये हैं।

दो सौ प्रतिबंधित किताबें

जवानी में बिस्मिल ने एक हिंदी किताब छपवाने में मदद की थी, जिसमें बताया गया था कि अमेरिका ने ब्रिटेन से आज़ादी कैसे पाई। उनके प्रांत की सरकार ने उस पर रोक लगा दी और प्रतियाँ ज़ब्त कर लीं।

पर बिस्मिल का दिल फिर भी उसे बेचना चाहता था। उनका मौक़ा दिल्ली में कांग्रेस पार्टी की एक बड़ी सभा में आया।

बिस्मिल ने लिखा कि वे वहाँ एम्बुलेंस स्वयंसेवक की वर्दी में थे। उन्होंने प्रतिबंधित किताब की लगभग दो सौ प्रतियाँ अपने ओवरकोट के नीचे छिपा लीं। फिर वे उन्हें आर्य समाज के शिविर से बाहर ले गए, पुलिस के ठीक सामने से।

दीवार के पार

उन्होंने शाहजहाँपुर में एक बाल-बाल बचने की घटना के बारे में भी लिखा। एक रात पुलिस ने छापा मारा, और नौजवानों ने पाया कि एक दरवाज़ा उनके सामने बंद है। तो वे दीवार फाँदकर निकल गए।

दूसरी ओर एक पुलिस दारोगा ने उन्हें रोक लिया। उन्होंने उसे बताया कि वे विद्यार्थी हैं, और उसने उन्हें जाने दिया। बाद में उन्होंने अपनी बंदूकें दफ़ना दीं और प्रयाग चले गए।

❏ **दारोगा:** थाने का प्रभारी पुलिस अफ़सर।

वह साथी जिसने उन पर गोली चलाई

किताब की हर कहानी बहादुरी की चालों के बारे में नहीं है। कुछ भरोसा टूटने के बारे में हैं।

मैनपुरी के सालों में उनके दिल के कुछ सदस्यों ने तय किया कि उनका एक साथी बहुत कमज़ोर है। उन्होंने उसे मार डालने की योजना बनाई। बिस्मिल ने एतराज़ किया। उन्होंने लिखा, "किसी इंसान को मारना ठीक नहीं है।"

बाद में वे प्रयाग के पास यमुना के किनारे बैठे थे। उन्हीं में से एक आदमी ने लगभग दो गज़ की दूरी से उन पर पिस्तौल चला दी।

बिस्मिल बच गए। वे लखनऊ भाग गए।

माँ का वचन

बिस्मिल बहुत गुस्से में थे। वे उस आदमी से बदला लेना चाहते थे जिसने उनकी जान लेने की कोशिश की थी। उन्हें बुखार आ गया।

उनकी माँ उनके पास आई। उन्होंने उनसे एक वचन माँगा: "मुझसे वादा करो कि तुम उस आदमी को नहीं मारोगे जिसने तुम्हारी हत्या की कोशिश की।"

पहले तो वे राज़ी नहीं हुए। पर आखिर में उन्होंने वचन दे दिया। उन्होंने लिखा कि वचन देने के बाद उनका बुखार उतरने लगा।

❏ **उनकी माँ:** उनका नाम मूलमती था। "हैंड फ़ॉर पैट्रियटिज़्म" के अनुसार फाँसी से एक दिन पहले वे गोरखपुर जेल में उनसे मिलने आई।

छिपा हुआ किसान

इसके बाद लंबे समय तक बिस्मिल छिपकर रहे। वे किसान की तरह खेतों में काम करते थे, और शायद ही किसी ने उन्हें पहचाना।

उनके परिवार ने भारी क़ीमत चुकाई। उनकी गिरफ़्तारी के वारंट की वजह से उनके पिता ने घर बेच दिया। उसकी क़ीमत 2,000 रुपये थी। उन्होंने उसे सिर्फ़ 800 में बेचा। वह पैसा उनकी बहनों की शादियों में गया, और उनके माता-पिता लगभग कंगाल हो गए।

तब भी बिस्मिल पढ़ते-लिखते रहे। उन्होंने एक दोस्त, सुशील चंद्र सेन, की याद में बांग्ला सीखी थी, जिनकी मौत हो चुकी थी। उन्होंने अपने छोटे भाई का नाम भी उन्हीं के नाम पर सुशील रखा। अब वे बांग्ला किताबों का हिंदी में अनुवाद करते और उन्हें एक श्रृंखला के रूप में छापते।

वे अनुवाद का कुछ काम मवेशी चराते हुए करते थे, जिसे उन्होंने "बड़ा मज़ेदार" कहा। उन किताबों से उन्हें लगभग 500 रुपये का नुकसान हुआ।

जब सरकार ने राजनीतिक कैदियों को माफ़ कर दिया, तो वे आखिरकार शाहजहाँपुर अपने घर लौटे। उन्होंने लिखा कि उन्हें पक्का यक़ीन था कि वे अपने शहर में फिर कभी आज़ादी से नहीं चल पाएँगे।

अशफ़ाक़

किताब अपने शाहजहाँपुर के दोस्त अशफ़ाक़उल्ला ख़ान की भी बात करती है। बिस्मिल हिंदू थे और अशफ़ाक़ मुसलमान। किताब की समीक्षा करने वाले इतिहासकार सलिल मिश्र अशफ़ाक़ को बिस्मिल का "हमराज़" कहते हैं। वे कहते हैं कि किताब बार-बार उसी दोस्ती के ज़रिए हिंदू-मुस्लिम एकता की बात पर लौटती है।

मिश्र बिस्मिल के दूसरे पहलू के बारे में भी ईमानदार हैं। वे बताते हैं कि बिस्मिल आर्य समाज के "शुद्धि" नाम के अभियान में भी शामिल थे, जिसे मिश्र आम तौर पर मुसलमानों के प्रति शत्रुतापूर्ण बताते हैं। असली लोग ऐसे विचार भी रख सकते हैं जो अलग-अलग दिशाओं में खींचते हों।

मन का बदलाव

किताब का सबसे चौकाने वाला हिस्सा अंत के पास आता है।

बिस्मिल ने सालों गुप्त दलों में बिताए थे और हथियारों से अंग्रेज़ी राज से लड़ने की योजनाएँ बनाई थीं। पर अपनी कोठरी में उन्होंने पीछे मुड़कर देखा, और उन्हें शक होने लगे।

उन्होंने लिखा कि बेहतर होता "अगर हमने अपनी कोशिशें जनता को पढ़ाने और उसमें जागरूकता फैलाने की ओर लगाई होती।" और उन्होंने लिखा: "अब मुझे यक़ीन है कि भारत में कोई भी क्रांतिकारी संगठन सफल नहीं हो सकता।"

□ **जनता:** पूरे देश के आम लोग।

उन्होंने भारत के नौजवानों के लिए एक संदेश छोड़ा। उन्होंने लिखा, "नौजवानों के लिए मेरा आखिरी संदेश यह है कि वे सच्चे मन से देश की सेवा करना चुनें।" उन्हें उम्मीद थी कि गाँववाले सच्चे देशभक्त बनेंगे, खादी पहनेंगे और भारत में बनी स्वदेशी चीज़ें इस्तेमाल करेंगे।

⊙ **स्रोत कहाँ अलग हैं**

एक पाठक का नज़रिया: ये पंक्तियाँ सलिल मिश्र की समीक्षा से ली गई हैं। वे इन्हें इस संकेत के रूप में पढ़ते हैं कि बिस्मिल हिंसक तरीकों पर सवाल उठा रहे थे। दूसरे पाठक किताब को अलग तरह से तौल सकते हैं, इसलिए उसे पूरा पढ़ना अच्छा है।

यह क्यों मायने रखता है

बिस्मिल अपने आखिरी हफ़्ते सिर्फ़ अपने सबसे बहादुर कारनामों के बारे में लिखने में लगा सकते थे। उन्होंने उनमें से कुछ के बारे में लिखा भी। पर उन्होंने अपने डर, अपनी ग़लतियों, अपनी माँ अपने क़र्ज़ों और अपने शक के बारे में भी लिखा।

यही उनकी किताब को ख़ास बनाता है। यह किसी मूर्ति की कहानी नहीं है। यह एक असली नौजवान की कहानी है, जो फाँसी के कुछ ही दिन पहले अपनी ज़िंदगी के बारे में गहराई से सोच रहा है।

इस पर बात कीजिए

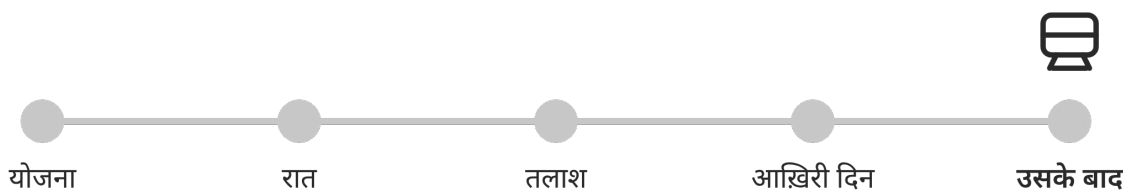
1. बिस्मिल ने अपनी बहादुरी के कारनामों के साथ अपनी गलतियों और शकों के बारे में भी लिखा। इससे उनकी किताब ज़्यादा भरोसेमंद क्यों बनती है?
2. उन्होंने अंत के पास अपना मन बदल लिया। किसी इंसान का ऐसा कर पाना क्यों ज़रूरी है?

उपसंहार

उसके बाद

दिसंबर 1927 से आज तक

जिन आदमियों को फाँसी हुई, उन्होंने भारत को आज़ाद होते नहीं देखा। पर दल उनके बिना चलता रहा। उसने अपना नाम बदला और समाजवादी विचार अपनाए। वह हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन बन गया, वही दल जिसके भगत सिंह और चंद्रशेखर आज़ाद सदस्य थे।



क़ब्र, मूर्ति और फ़िल्म

अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को 27 साल की उम्र में फाँसी हुई। उसके बाद क्या हुआ? उनका परिवार, शाहजहाँपुर में उनकी क़ब्र, जिस जेल में वे मरे वहाँ की एक मूर्ति, और एक फ़िल्म जिसने एक नई पीढ़ी को पूछने पर मजबूर किया कि वे कौन थे।



इस किताब के लिए एआई से बनाई गई पेंटिंग। यह एक दृश्य दिखाती है; यह तस्वीर नहीं है।

अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को 19 दिसंबर 1927 को फाँसी दी गई। वे 27 साल के थे। उनके लिए कहानी वहीं ख़त्म हो गई। पर उन्हें याद करने वालों के लिए नहीं।

यह कहानी उसके बाद की है। यह एक परिवार, एक क़ब्र, एक मूर्ति और एक फ़िल्म की कहानी है। यह एक ऐसी दोस्ती की कहानी भी है जिसकी बात लोग आज भी करते हैं।

वह जगह जहाँ वे मरे

अशफ़ाक़ को फ़ैज़ाबाद की ज़िला जेल में फाँसी दी गई। काकोरी के क़ैदियों पर नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब के अनुसार वह चबूतरा, जहाँ यह हुआ, आज भी वहाँ है। उस जगह अब अशफ़ाक़ की एक आदमक़द मूर्ति खड़ी है।

ऐसा सिर्फ़ एक स्रोत कहता है, पर एक स्मारक वेबसाइट जेल के बारे में इससे सहमत है। वह फ़ैज़ाबाद जेल को अशफ़ाक़ का "आखिरी घर" कहती है, वह जगह जहाँ उन्होंने अपने आखिरी शेर लिखे।

उनकी क़ब्र

उन्हें उनके गृहनगर शाहजहाँपुर में दफ़नाया गया है। वहाँ एक स्मारक क़ब्र है, जिसे अशफ़ाक़उल्लाह ख़ान स्मारक कहते हैं, और हर 19 दिसंबर को लोग वहाँ इकट्ठा होते हैं। एक समाचार वेबसाइट द प्रिंट भी कहती है कि शाहजहाँपुर में एक स्मारक क़ब्र बनाई गई।

यह स्मारक वेबसाइट अशफ़ाक़ के प्रशंसक चलाते हैं और अपने बनाने वालों के नाम नहीं बताती। यहाँ क़ब्र और भीड़ के इकट्ठा होने की बात पर उसका भरोसा किया गया है, क्योंकि द प्रिंट भी यही कहता है। जो बातें और कोई नहीं कहता, उनके लिए उस पर भरोसा नहीं किया गया है।

कोई भी स्रोत दफ़नाने का हाल नहीं बताता। वहाँ कौन था और क्या कहा गया, यह रिकॉर्ड में नहीं है।

उनके परिवार का क्या हुआ

अशफ़ाक़ के पोते शहदाबुल्लाह फ़ाँसी के बाद की बातें याद करते हैं। ब्रिटिश सरकार ने परिवार की संपत्ति छीन ली। उनकी दादी का परिवार खाता-पीता था, और उससे परिवार को गुज़ारा करने में मदद मिली।

उन्होंने एक दुखद बात भी कही। लगता है लोग अशफ़ाक़ को साल में सिर्फ़ दो बार याद करते हैं, स्वतंत्रता दिवस पर और उनके मरने के दिन।

ये एक आदमी के अपने परिवार के बारे में शब्द हैं। ये अदालत का रिकॉर्ड नहीं हैं। फिर भी ये हमें याद दिलाते हैं कि फ़ाँसी के बाद एक परिवार पीछे रह जाता है।

उनके पिता की ओर से वे पठान थे, और उनके पिता कोतवाल थे, पुराने ढंग के पुलिस अफ़सर। उनके सबसे बड़े भाई ने उन्हें बिस्मिल की बहादुरी और उनकी उर्दू कविताओं के क्रिस्से सुनाए, इसके बहुत पहले कि दोनों मिले। यह भी पोते का ही बयान है।

एक दोस्त के शब्द

अशफ़ाक़ के सबसे जाने-माने दोस्त राम प्रसाद बिस्मिल थे। जेल में लिखी अपनी आत्मकथा में बिस्मिल ने अशफ़ाक़ को संबोधित करते हुए पूरा एक अंश लिखा।

बिस्मिल ने लिखा कि अशफ़ाक़ दोस्त के रूप में शुरू हुए और भाई जैसे बन गए। लोगों को हैरानी होती थी कि एक पक्का आर्य समाजी हिंदू और एक पक्का मुसलमान दोस्त कैसे हो सकते हैं। जब दोस्तों ने अशफ़ाक़ पर शक किया, तो वे अपने रास्ते पर सीधे चलते रहे। जब कुछ मुसलमानों ने उनकी दोस्ती के लिए उन्हें डाँटा, तो उन्होंने ध्यान नहीं दिया।

अख़बार काउंटरव्यू कहता है कि बिस्मिल की आत्मकथा इस दोस्ती को इस बात के सबूत की तरह इस्तेमाल करती है कि हिंदू-मुस्लिम एकता मुमकिन है। अशफ़ाक़ ने फ़ाँसी से पहले हिंदुओं और मुसलमानों से कहा कि वे झगड़ना बंद करें और देश के लिए मिलकर काम करें।

बिस्मिल ने उसी आत्मकथा में एक और बात कही। उन्होंने लिखा कि सांप्रदायिक दंगों में हिस्सा लेने वालों को हल्की सज़ाएँ मिलीं, जबकि बेवजह की हिंसा से बचने वाले आज़ादी के सेनानियों को मौत मिली। अशफ़ाक़ उन्हीं सेनानियों में से एक थे। यह बिस्मिल की राय है, अदालत का फैसला नहीं।

उनके अपने शब्द

अशफ़ाक़ उपनामों से कविताएँ लिखते थे। नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब उन्हें वर्सी और हज़रत बताती है। स्मारक वेबसाइट और विकिपीडिया हसरत नाम देते हैं।

एक कविता में वे कहते हैं कि वे सिर्फ़ अपनी मातृभूमि की सेवा के लिए जीते हैं। दूसरी में वे कहते हैं कि चाहे उन्हें लंबी सज़ा मिले या मौत की सज़ा, वे बेड़ियों में जकड़े हाथों से भी उसके गुण गाएँगे।

फ़ाँसी से तीन दिन पहले उन्होंने फ़ैज़ाबाद जेल में एक कविता लिखी। उसकी एक पंक्ति अंग्रेज़ी में यूँ है: "उनके जुल्म से थककर हम फ़ैज़ाबाद की जेल से शून्य की ओर चले जाते हैं।"

इन कविताओं की असली लिखावट नहीं देखी गई। वे वैसे ही दी गई हैं जैसे किताब और वेबसाइट देती हैं, और उन्हें पक्का नहीं कहा जाता।

दल का नया नाम

अशफ़ाक़, बिस्मिल, लाहिड़ी और रोशन सिंह को फाँसी होने के बाद उनका दल उनके बिना चलता रहा। उसने अपना नाम बदला और समाजवादी विचार अपनाए। वह हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन बन गया। भगत सिंह और चंद्रशेखर आज़ाद इसी दल के थे।

फ़िल्म

2006 में हिंदी फ़िल्म रंग दे बसंती ने अशफ़ाक़उल्ला ख़ान को परदे पर उतारा। कुणाल कपूर नाम के अभिनेता ने उनका किरदार निभाया।

परदे पर दो और किरदार हैं। एक टीवी धारावाहिक चंद्रशेखर में है। दूसरा मुजाहिद-ए-आज़ादी: अशफ़ाक़उल्लाह ख़ान में है, जो 2014 में चैनल डीडी उर्दू पर दिखाया गया एक कार्यक्रम था।

फ़िल्म इतिहास नहीं होती। वह सिनेमा के दर्शकों के लिए सुनाई गई कहानी होती है। पर वह लोगों में जिज्ञासा जगा सकती है, और जिज्ञासा शुरू करने की अच्छी जगह है। कुछ दर्शकों ने शायद पहली बार वहीं उनका नाम सुना होगा।

क्या पता है, और क्या नहीं

फाँसी का समय और जगह पता है। परिवार बताता है कि उन्हें कहाँ याद किया जाता है। उनके कुछ शब्द किताबों और वेबसाइटों में आगे आए हैं।

बहुत कुछ अब भी गायब है। किसी ने नहीं लिखा कि उनके दफ़नाने में कौन आया। उनकी असली चिट्ठियाँ नहीं मिली हैं। और 1927 के बाद उनके परिवार पर जो बीती, उसका कोई पूरा बयान नहीं है।

यह क्यों मायने रखता है

एक नौजवान 27 साल की उम्र में एक मक़सद के लिए मर गया। लगभग सौ साल बाद भी उसकी बात की जाती है।

इसकी एक वजह दूसरे धर्म के एक आदमी से उनकी दोस्ती है। एक वजह उनकी कविताएँ हैं। और एक वजह यह है कि लोग उनकी कहानी सुनाते रहते हैं, जेलों में, परदे पर और बच्चों की किताबों में। अगर आप और जानना चाहते हैं, तो किसी बड़े से कहिए कि आपको पुस्तकालय ले जाएँ। वहाँ आप बिस्मिल की आत्मकथा ढूँढ़कर पढ़ सकते हैं कि उन्होंने अपने दोस्त के बारे में क्या लिखा।

इस पर बात कीजिए

1. कहानी के अनुसार फ़िल्म "इतिहास नहीं" क्यों है, और फिर भी वह उपयोगी क्यों हो सकती है?
2. अध्याय के आखिरी हिस्से के अनुसार अशफ़ाक़ के बारे में अब भी क्या नहीं पता है?

रिकॉर्ड कहाँ अलग हैं

काकोरी के बारे में बारह सवाल जिनके जवाब स्रोत अलग-अलग देते हैं। एक अच्छा इतिहासकार दरार को छिपाता नहीं, दिखाता है।

सवाल	स्रोत क्या कहते हैं	यह किताब क्या करती है
कितना पैसा लिया गया?	4,553 रुपये, 3 आने, 6 पाई (हाई कोर्ट का इतिहास)। 4,601 रुपये, 15 आने, 6 पाई (पुलिस रिपोर्ट)। लगभग 8,000 रुपये (अंग्रेज़ी विकिपीडिया)।	तीनों दिखाए गए हैं। कोई भी फ़र्क़ को नहीं समझाता।
अहमद अली को मारने वाली गोली किसने चलाई?	अदालत का इतिहास नहीं बताता। अंग्रेज़ी विकिपीडिया कहता है मन्मथनाथ गुप्त ने, अनजाने में। एक अख़बार की रिपोर्ट इसे अनजाने में चली गोली कहती है।	अध्याय बताते हैं कि किसका नाम लिया गया है, और किसने लिया है।
ज़ंजीर किसने खींची?	द वायर कहता है कि माना जाता है कि लाहिड़ी ने खींची। नेशनल बुक ट्रस्ट की एक किताब कहती है कि लाहिड़ी, अशफ़ाक़उल्ला ख़ान और सर्चीद्रनाथ बख़्शी दूसरे दर्जे के डिब्बे से उतरे। दूसरे बयान किसी का नाम नहीं लेते।	इसे "माना जाता है" के रूप में लिया गया, पक्की बात के रूप में नहीं।
क्या रोशन सिंह गाड़ी पर थे?	दो स्रोत (नेशनल बुक ट्रस्ट की एक किताब और अंग्रेज़ी विकिपीडिया) कहते हैं कि वे नहीं थे। एक और शोधकर्ता के हवाले से बताया जाता है कि सरकार की एक किताब उन्हें वहाँ बताती है, उसे खोला नहीं जा सका।	हम उन दो को मानते हैं जिन्हें हम पढ़ सके और यह कहते हैं।
मुक़दमा कब शुरू हुआ?	4 जनवरी 1926 (नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब)। 1 मई 1926 (अंग्रेज़ी विकिपीडिया)। अदालत का इतिहास कहता है कि वह "लगभग 8 महीने" चला।	दोनों तारीखें दिखाई गई हैं, कम-से-कम एक ग़लत है।
जज कौन थे?	मिस्टर हैमिल्टन (अदालत का इतिहास, किताब, अंग्रेज़ी विकिपीडिया)। एक हिंदी बयान एनुद्दीन कहता है।	हम उन तीन को मानते हैं जो एकमत हैं।
चीफ़ कोर्ट ने अपना फैसला कब दिया?	11 अगस्त 1927 (अदालत का इतिहास)। 22 अगस्त 1927 (दोनों विकिपीडिया)।	दोनों तारीखें दिखाई गई हैं।
लाहिड़ी को दो दिन पहले फाँसी क्यों दी गई?	एक किताब कहती है कि सरकार को उन्हें छुड़ाने की कोशिश का डर था। कोई और स्रोत कोई वजह नहीं देता, और कोई सरकारी आदेश नहीं देखा गया।	अप्रमाणित कहानी के रूप में रखा गया।
लाहिड़ी का जन्म कब हुआ?	1901 (द वायर, विकिपीडिया)। 1892 (नेशनल बुक ट्रस्ट की किताब)।	दोनों दिखाए गए हैं, मौत के समय उनकी उम्र तय नहीं है।
रोशन सिंह ने अपनी आखिरी चिट्ठी कब लिखी?	13 दिसंबर 1927 (एक रूप) या 6 दिसंबर (ज़्यादा लंबा रूप)। असली चिट्ठियाँ नहीं देखी गईं।	लेबल लगाया गया; 13 दिसंबर की तारीख "एक हफ़्ते के भीतर" से बेहतर मेल खाती है।
रोशन सिंह किस जेल में थे?	इलाहाबाद जेल, मलाका जेल या नैनी जेल। ये एक ही जगह हो सकती है या एक-दूसरे के पास की दो जेलें।	परिचयों में "इलाहाबाद" कहा गया; अध्याय समझाता है।
अशफ़ाक़उल्ला कब गिरफ़्तार हुए?	7 दिसंबर 1926 (ज़्यादातर स्रोत)। 17 जुलाई 1926 (एक बयान)।	ज़्यादातर स्रोतों को माना गया; दूसरे का ज़िक्र किया गया।

प्रश्नोत्तरी का समय

किताब से बारह सवाल। उत्तर "उत्तर" वाले पन्ने पर हैं।

 1. काकोरी के पास जो गाड़ी रोकी गई, उसका नंबर क्या था?

- A. 8 डाउन
- B. 12 अप
- C. नंबर 3

 2. मन्मथनाथ गुप्त को किसका माउज़र पिस्तौल थमाया गया था?

- A. बिस्मिल का
- B. अशफ़ाक़उल्ला ख़ान का
- C. आज़ाद का

 3. यात्रियों से क्या कहा गया?

- A. उतरकर भाग जाओ
- B. अंदर रहो, क्योंकि सिर्फ़ सरकारी पैसा चाहिए
- C. अपना सामान दे दो

 4. अहमद अली का पेशा क्या था?

- A. ट्रेन गार्ड
- B. पुलिसवाला
- C. वकील

 5. फ़ाँसी पाने वाले चारों में से किसके बारे में दो स्रोत कहते हैं कि वह गाड़ी पर नहीं था?

- A. रोशन सिंह
- B. लाहिड़ी
- C. बिस्मिल

 6. रोशन सिंह को किस लूट के लिए सज़ा मिली?

- A. काकोरी
- B. बमरौली
- C. द्वास्कापुर

7. पहली पुलिस रिपोर्ट किस भाषा में लिखी गई थी?

- A. अंग्रेज़ी
- B. हिंदी
- C. उर्दू

8. मुकदमे में सरकार का वकील कौन था?

- A. पंडित जगत नारायण
- B. सी. बी. गुप्ता
- C. गोविंद बल्लभ पंत

9. केंद्रीय विधायिका के कितने सदस्यों ने वायसराय के नाम ज्ञापन पर दस्तखत किए?

- A. 18
- B. 78
- C. 108

10. चारों में से किसे सबसे पहले, 17 दिसंबर 1927 को, फाँसी हुई?

- A. राजेंद्र लाहिड़ी
- B. रोशन सिंह
- C. अशफ़ाक़उल्ला ख़ान

11. डाल्टनगंज में छिपते समय अशफ़ाक़उल्ला क्या काम करते थे?

- A. शिक्षक
- B. क्लर्क
- C. किसान

12. गोरखपुर जेल में बिस्मिल ने अपनी ज़िंदगी की कहानी किस पर लिखी?

- A. कागज़ के टुकड़ों पर
- B. जिल्द वाली डायरी पर
- C. टाइपराइटर पर

गतिविधियाँ

1. स्रोतों के जासूस बनिए

इन मतभेदों में से एक चुनिए। दोनों बातें लिखिए, फिर सवालों के जवाब दीजिए।

- काकोरी में लिया गया पैसा (तीन अलग रकमों)।
- मुक़दमा कब शुरू हुआ (4 जनवरी 1926 या 1 मई 1926)।
- रोशन सिंह ने अपनी आखिरी चिट्ठी कब लिखी (13 दिसंबर या 6 दिसंबर 1927)।

बात क कहती है: _____

बात ख कहती है: _____

आप किस पर ज़्यादा भरोसा करेंगे, और क्यों? _____

इसे सुलझाने के लिए आप क्या जाँचेंगे? _____

2. चार सीटें, एक रेलगाड़ी

उस रात का एक व्यक्ति चुनिए: लाहिड़ी, अशफ़ाक़उल्ला, आज़ाद, अहमद अली या रोशन सिंह। सिर्फ़ वही बातें इस्तेमाल करते हुए जो अध्याय बताते हैं, तीन वाक्य लिखिए कि वह व्यक्ति जहाँ था वहाँ से रात कैसी दिखती थी। फिर जिस भी बात का आपको अंदाज़ा लगाना पड़ा, उसके नीचे लकीर खींचिए।

3. वह सवाल जो आप पूछते

अगर आप इस किताब के किसी एक व्यक्ति से एक सवाल पूछ सकते, तो वह कौन होता, और आप क्या पूछते? आपको क्या लगता है कि किसी ने जवाब क्यों नहीं लिखा?

उत्तर

प्रश्नोत्तरी

1. A 2. B 3. B 4. C 5. A 6. B 7. C 8. A 9. B 10. A 11. B 12. A

"इस पर बात कीजिए" के सवालों और गतिविधियों का कोई एक सही जवाब नहीं है। छोटे पाठकों से कहिए कि वे किताब का वह वाक्य दिखाएँ जिससे उन्हें ऐसा लगा।

जिज्ञासा का प्रमाण-पत्र

यह प्रमाण-पत्र प्रदान किया जाता है

काकोरी की कहानी पढ़ने और यह पूछने के लिए कि "यह कौन कह रहा है?"

शब्दावली

आने और पाई

उन दिनों एक रुपये के 16 आने होते थे और हर आने की 12 पाई। इसलिए 15 आने 6 पाई लगभग एक और रुपये के बराबर थे।

आत्मकथा

किसी इंसान की ज़िंदगी की कहानी, जो उसी ने लिखी हो।

बमटौली

इस मामले की चार लूटों में पहली। यह 1924 की क्रिसमस की रात, पीलीभीत ज़िले में हुई थी। यह काकोरी में नहीं थी।

क्लर्क

दफ्तर में काम करने वाला आदमी, जो चिट्ठियाँ लिखता है, हिसाब रखता है और कागज़ फ़ाइल करता है।

सज़ा घटाना

किसी सज़ा को हल्की सज़ा में बदल देना। फाँसी की सज़ा घटाकर उम्रकैद की जा सकती है।

साज़िश

कुछ लोगों का मिलकर बनाया गया गुप्त मंसूबा, जिसमें वे क़ानून के खिलाफ़ कुछ करना चाहते हों।

डकैती

गिरोह की लूट। पुराने क़ानून में जिस डकैती में किसी की जान जाती, उसकी सज़ा बहुत कड़ी होती थी।

दाटोगा

थाने का प्रभारी पुलिस अफ़सर।

एफ़आईआर

फ़र्स्ट इन्फ़ॉर्मेशन रिपोर्ट। किसी जुर्म के बारे में पुलिस जो सबसे पहली लिखित रिपोर्ट बनाती है, उसे यह कहते हैं।

एचआरए

हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, 1924 में बना एक गुप्त दल। 1928 में वह एचएसआरए बन गया और आज़ाद उसके नेता बने।

वफ़ादारी

अपने दोस्तों के प्रति सच्चे रहना, मुश्किल वक़्त में भी। इसका मतलब हमेशा उनसे सहमत होना नहीं होता।

मौलवी

मुसलमान विद्वान और शिक्षक। उन दिनों उत्तर भारत के बहुत-से बच्चे उर्दू किसी मौलवी से ही सीखते थे।

मुशायरा

वह महफ़िल जिसमें कवि अपनी कविताएँ ज़्यादातर उर्दू में, सामने बैठे श्रोताओं को सुनाते हैं।

उपनाम

वह नाम जो लेखक अपने असली नाम की जगह इस्तेमाल करता है। राम प्रसाद ने तीन नाम अपनाए: राम, अज्ञात और बिस्मिल। बिस्मिल का मतलब है "घायल"।

प्रिवी काउंसिल

लंदन में वरिष्ठ सलाहकारों का एक समूह। उन दिनों वह ब्रिटिश भारत के लोगों के लिए अपील की आखिरी अदालत थी।

लूट

यहाँ इसका मतलब है आदमियों के एक गिरोह का किसी जगह या रेलगाड़ी पर हमला करके पैसा लूटना। इसके लिए पुराना शब्द "डकैती" था।

स्रोत

हर अध्याय कम से कम दो स्रोतों पर टिका है। हर अध्याय में इस्तेमाल किए गए स्रोत:

1. ख़ुद को बिस्मिल लिखने वाला कवि

- Ram Prasad Bismil. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ram_Prasad_Bismil
- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon (chapter on Ramprasad Bismil). National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- History of the Court in Avadh, by H. K. Ghose (Revolutionary Conspiracy Case). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- Early life (Project Tiranga). Sankalp India Foundation. <https://www.sankalpindia.net/book/early-life-7>
- Revolutionary actions in Mainpuri (Project Tiranga). Sankalp India Foundation. <https://sankalpindia.net/book/revolutionary-actions-mainpuri>
- Literature Defying the Raj, by Chaman Lal (Yojana, August 2022). Publications Division, Government of India. https://www.publicationsdivision.nic.in/journals/Journalarchives/Yojana/Yojana-English/2022/August/Yojana_2022_August_.pdf

2. राम और अशफ़ाक़

- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon (chapter: An Immortal Patriot). National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Early Life: Ashfaq Ullah Khan. Ashfaq Ullah Khan Memorial Shaheed Shodh Sansthan, Faizabad. <https://aukmsss.wordpress.com/early-life/>
- Ashfaqulla Khan. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ashfaqulla_Khan
- Ram Prasad Bismil. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ram_Prasad_Bismil
- History of the Court in Avadh from 1856 A.D., by H. K. Ghose. Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>

3. काकोरी को "ना" कहने वाला आदमी

- Ashfaqulla Khan. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ashfaqulla_Khan
- Ram Prasad Bismil. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ram_Prasad_Bismil
- History of the Court in Avadh from 1856 A.D., by H. K. Ghose. Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- Kakori conspiracy. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Kakori_conspiracy

4. काकोरी की जंजीर

- Hanged for Patriotism. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Remembering Rajendranath Lahiri. The Wire. <https://m.thewire.in/article/history/rajendranath-lahiri-indian-revolutionary/amp>
- History of the Court in Avadh, 1856 onwards (H. K. Ghose). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- Rajendra Lahiri. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Rajendra_Lahiri

5. गाड़ी से उतरने वाला यात्री

- History of the Court in Avadh, by H. K. Ghose (Revolutionary Conspiracy Case). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>

- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Kakori train robbery. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Kakori_train_robbery
- काकोरी काण्ड (Kakori Kand). Wikipedia (Hindi). https://hi.wikipedia.org/wiki/काकोरी_काण्ड

6. काकोरी से बच निकलने वाला

- Kakori conspiracy. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Kakori_conspiracy
- Chandra Shekhar Azad. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Chandra_Shekhar_Azad
- Chandra Shekhar Azad. Drishti IAS. <https://www.drishtiias.com/daily-news-analysis/chandra-shekhar-azad>

7. मामले में, पर गाड़ी पर नहीं

- Hanged for Patriotism. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- History of the Court in Avadh, 1856 onwards (H. K. Ghose). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- Roshan Singh. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Roshan_Singh

8. गाड़ी से पहले: तीन लूटें जो ग़लत हो गईं

- History of the Court in Avadh, by H. K. Ghose (Revolutionary Conspiracy Case). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- काकोरी काण्ड (Kakori Kand). Wikipedia (Hindi). https://hi.wikipedia.org/wiki/काकोरी_काण्ड
- Kakori train robbery. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Kakori_train_robbery
- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>

9. उर्दू में लिखी पुलिस रिपोर्ट

- Kakori FIR copy: Priceless page from the past (Aakash Ghosh, 10 August 2024). Hindustan Times. <https://www.hindustantimes.com/cities/lucknow-news/kakori-fir-copy-priceless-page-from-the-past-101723231512172.html>
- Kakori conspiracy. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Kakori_conspiracy
- History of the Court in Avadh, by H. K. Ghose (Revolutionary Conspiracy Case). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- Indian anna. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Indian_anna
- Indian Penal Code, Section 396: Dacoity with murder. CourtBook. <https://courtbook.in/indian-penal-code-1860/section-396>

10. मथुरा का क्लर्क

- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon (chapter: An Immortal Patriot). National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Ashfaqulla Khan (1900–1927). Congress Sandesh, Indian National Congress. <https://inc.in/congress-sandesh/tribute/ashfaqulla-khan-22nd-october-1900-19th-december-1927>
- Ashfaqulla Khan. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ashfaqulla_Khan
- Parikrama: the Kakori Train Action. News on AIR (Akashvani). <https://newsonair.gov.in/bulletins-detail/parikrama-462/>

11. लखनऊ का लंबा मुकदमा

- History of the Court in Avadh, by H. K. Ghose (Revolutionary Conspiracy Case). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>

- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Kakori train robbery. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Kakori_train_robbery
- काकोरी काण्ड (Kakori Kand). Wikipedia (Hindi). https://hi.wikipedia.org/wiki/काकोरी_काण्ड

12. वायसराय के नाम अठहत्तर नाम

- Kakori train robbery. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Kakori_train_robbery
- काकोरी काण्ड (Kakori Kand). Wikipedia (Hindi). https://hi.wikipedia.org/wiki/काकोरी_काण्ड
- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Kakori Conspiracy Case 1925: Case Study. LegalBites. <https://www.legalbites.in/kakori-conspiracy-case-1925-case-study>
- History of the Court in Avadh, by H. K. Ghose (Revolutionary Conspiracy Case). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>

13. दो दिन पहले

- Hanged for Patriotism. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Remembering Rajendranath Lahiri. The Wire. <https://m.thewire.in/article/history/rajendranath-lahiri-indian-revolutionary/amp>
- History of the Court in Avadh, 1856 onwards (H. K. Ghose). Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- Rajendra Lahiri. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Rajendra_Lahiri

14. दिसंबर के दो हफ्ते

- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Thakur Roshan Singh (Webdunia, Hindi). Webdunia. https://hindi.webdunia.com/inspiring-personality/roshan-singh-117121900043_1.html
- Thakur Roshan Singh (Satyarth Prakash Nyas). Satyarth Prakash Nyas. <https://satyarthprakashnyas.org/thakur-roshan-singh/>
- Roshan Singh. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Roshan_Singh
- Bismil ka sandes hai. The Lucknow Observer. <https://lucknowobserver.com/bismil-ka-sandes-hai/>
- Kakori Train Action Day special: land of martyr Thakur Roshan Singh (Garima Times, Hindi). Garima Times. <https://garimatimes.in/kakori-train-action-day-special-land-of-martyr-thakur-roshan-singh-remained-helpless-for-70-years/>

15. फैजाबाद की आखिरी मुबह

- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon (chapter: An Immortal Patriot). National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Ashfaqulla Khan. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ashfaqulla_Khan
- Few Words from Ashfaq's Diary. Ashfaq Ullah Khan Memorial Shaheed Shodh Sansthan, Faizabad. <https://aukmsss.wordpress.com/few-words-from-ashfaqs-diary/>
- History of the Court in Avadh from 1856 A.D., by H. K. Ghose. Allahabad High Court. <https://www.allahabadhighcourt.in/event/HistoryOfTheCourtInAvadhFrom1856HKGhose.pdf>
- Rajendra Lahiri. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Rajendra_Lahiri
- Roshan Singh. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Roshan_Singh

16. कागज़ के टुकड़ों पर लिखी कहानी

- From the autobiography: What Ram Prasad Bismil wrote in secret about his life while on death row (excerpt from A Glimpse of My Life, tr. Awadhesh Tripathi, 2 May 2025). Scroll.in. <https://scroll.in/article/1081656/from-the-autobiography-what-ram-prasad-bismil-wrote-in-secret-about-his-life-while-on-death-row>
- 'A Glimpse of My Life' by Ram Prasad Bismil: a moving autobiography of a young revolutionary, review by Salil Misra (3 August 2025). Scroll.in. <https://scroll.in/article/1083175/a-glimpse-of-my-life-by-ram-prasad-bismil-a-moving-autobiography-of-a-young-revolutionary>
- English translation of Ram Prasad 'Bismil' autobiography to release in April (31 March 2025). The Week (PTI). <https://www.theweek.in/wire-updates/national/2025/03/31/1st2-book-bismil-translation.html>
- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon (chapter on Ramprasad Bismil). National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Ram Prasad Bismil. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ram_Prasad_Bismil

17. कब्र, मूर्ति और फ़िल्म

- Hanged for Patriotism, by R. K. Tandon. National Book Trust, India. <https://www.nbtindia.gov.in/writereaddata/freebooks/pdf/Hanged%20for%20Patriotism.pdf>
- Hanged at 27, Ashfaqulla Khan was a revolutionary with fire in his belly. ThePrint. <https://theprint.in/theprint-profile/hanged-at-27-ashfaqulla-khan-revolutionary-with-fire-in-his-belly/308954/>
- Ashfaqulla Khan. Wikipedia. https://en.wikipedia.org/wiki/Ashfaqulla_Khan
- Martyred freedom fighters: Ashfaqullah. Counterview. <https://www.counterview.in/2023/11/martyred-freedom-fighters-ashfaqullah.html>
- Shaheed Ashfaqullah Khan. Shaheed Ashfaqullah Khan memorial website. <https://shaheedashfaqullahkhan.org/>

तस्वीरों के श्रेय

हर अध्याय की शुरुआत की पेंटिंग और तीन कॉमिक पन्नों की तस्वीरें इस किताब के लिए लिखे गए विवरणों से एआई इमेज टूल्स की मदद से बनाई गई थीं। उन पर एआई तस्वीर का लेबल लगा है और वे फ़ोटो नहीं हैं। बाक़ी सभी तस्वीरें असली फ़ोटो या दस्तावेज़ हैं। हर एक या तो सार्वजनिक संपत्ति (public domain) में है या भारत सरकार के ओपन डेटा लाइसेंस (GODL-India) के तहत इस्तेमाल हुई है, और नीचे हर श्रेय विकिमीडिया कॉमन्स पर उसके स्रोत से जुड़ा है। (श्रेय-पंक्तियाँ अंग्रेज़ी में ही रखी गई हैं।)

- Ashfaqulla Khan, in an undated photograph from the 1920s.... — Unknown photographer, public domain. [https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ashfaq_Ulla_Khan_\(2\).JPG](https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ashfaq_Ulla_Khan_(2).JPG)
- Ram Prasad Bismil, Ashfaq's closest friend.... — Unknown photographer, public domain. <https://commons.wikimedia.org/wiki/File:%E0%A4%AC%E0%A4%BF%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%AE%E0%A4%BF%E0%A4%B2901.gif>

इस किताब का इस्तेमाल

कॉपीराइट। © 2026 द स्ट्रगल फ़ॉर फ़्रीडम। यह पाठ, सामग्री के चुनाव और क्रम, डिज़ाइन और कोड पर लागू होता है। पेंटिंग एआई इमेज टूल्स से बनाई गई, इसलिए उनमें क़ानून हमें जो भी अधिकार देता है, हम वही और उससे ज़्यादा कुछ नहीं जताते। असली फ़ोटो और दस्तावेज़ों के अपने लाइसेंस हैं, जो ऊपर के श्रेयों में दिखाए गए हैं। इस किताब का लाइसेंस उन्हें नहीं बदलता।

आपका लाइसेंस। यह किताब आपको लाइसेंस पर दी गई है, बेची नहीं गई। आप इसे अपने उपकरणों पर पढ़ सकते हैं, छाप सकते हैं, और एक परिवार के साथ या एक शिक्षक और उसकी कक्षा के साथ इस्तेमाल कर सकते हैं, जिसमें कक्षा में स्क्रीन पर दिखाना भी शामिल है। कृपया इसे दूसरे परिवारों या कक्षाओं को न भेजें या न उनकी नक़ल करें, इसे ऑनलाइन या किसी साझा ड्राइव पर न डालें, इसे बेचें या मुफ़्त में न दें, और इसके पाठ या तस्वीरों का इस्तेमाल एआई सिस्टम को प्रशिक्षित करने में न करें। मुफ़्त नमूना पूरा और बिना बदलाव के साझा किया जा सकता है।

इस शृंखला में और

भगत सिंह: छह सच्ची कहानियाँ। इस किताब का दल, एचआरए, दिसंबर 1927 के बाद एचएसआरए बन गया, वही दल जिसके भगत सिंह और चंद्रशेखर आज़ाद सदस्य थे।